चन्दामामा
जनवरी १९७९
Rs
35

DADDY
MUMMY
AND...
I
" ये सब मैंने अपने
एको स्केच पेनसे
बनाये हैं। "
EKCO
स्केच पेन
EKCO
SKETCH PEN
रंग ही रंग... जिनसे बच्चों को प्यार है. वे
चाहते हैं—नित नये चित्र बनाना.
अपने बच्चों की गुप्त कला को प्रोत्साहन
दीजिए...उन्हें एको स्केच पेन का
आकर्षक सेट उपहारस्वरूप दीजिए.
ये कई मनपसंद रंगों में मिलते हैं.
वितरक :
किरण एण्ड कंपनी,
७३/९, शामसेट स्ट्रीट, बम्बई ४०० ००२
फोन : ३२४४३२
एको स्केच पेन से लिखने का मज़ा ही कुछ और है.
ADVERTS/MP/216/HIN/38

बी. नागी रेड्डी
प्रस्तुत करते हैं,
एक नयी महान फिल्म
स्वर्ग नरक
विजय प्रौडक्शन्स-चित्र
जीवन की धूप छांव की कहानी
ज़िन्दगी के मंच पर पांच
ऐसे किरदार, जिनके सही या
गलत कदम घर को स्वर्ग
बना सकते हैं या नर्क।
संगीत: राजेश रोशन
गीत: आनंद बक्षी, हरिन्द्रनाथ चट्टोपाध्य
संवाद: राज बलदेव राज
फोटोग्राफी: पी. एन. राव
कला: एस. कृष्णराव
एडिटिंग: के. बालू
नृत्य: सुरेश भट्ट और सलीम
प्रौडक्शन कन्ट्रोलर: एन. वीरराघवलु
स्टील्स: आर. एन. नागराज राव,
के. नरसिंह राव और ए. शंकर राव
स्टुडियो: विजय-वाहिनी

चन्दामामा

जनवरी 1979

★

विषय-सूची

★

एक प्रति : १-२५

वार्षिक चन्दा : १५-००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "लोभ का फल" है। इसमें दो परस्पर विरोधी मानसिक वृत्तिवाले धर्मदास और गंगादास नामक दो डाकुओं के दृष्टिकोणों का मार्मिक चित्र अंकित हुआ है।

अमर वाणी

कि तया क्रियते धेन्वा
या न सूते, न दुग्धदा?
कोर्थं पुत्रेण जातेन
यो न विद्वा नभक्तिमान ।।

[गाय बांझ बनकर दूध न दे तो फ़ायदा ही क्या रहा? इसी प्रकार विद्या-विनय विहीन पुत्र के होने से लाभ क्या है?]

वर्ष : ३१ | जनवरी १९७९ | अंक : ५

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

सुधाकर 'बंधु', अजमेर (राजस्थान)

प्रश्न : क्या बता सकते हैं कि इस वैज्ञानिक युग में चन्दामामा की वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त करने के बाद उसका प्रभाव "चन्दामामा" पर कहाँ तक पड़ा है?

उत्तर : जब से खगोल ज्ञान का परिचय हुआ तब से असली चन्दामामा के बारे में सब कोई जानते हैं। फिर भी पुराणों में चन्द्रमा एक मानव के रूप में प्रचलन पाते आ रहा है। हमारा "चन्दामामा" एक नाम है, केवल संकेत मात्र है। "सुधाकर भी चन्दामामा का नाम है, पर आप के तथा चन्दामामा की वास्तविकता का क्या संबंध है?

के. जी. सरलाकुमारी और के. जी. हेमलता, कुप्पम (आन्ध्र)

प्रश्न : चन्दामामा से नक्षत्र कितने गुने बड़ा है? चन्द्र मण्डल तथा नक्षत्र मण्डल के बीच की दूरी कितनी है?

उत्तर : पृथ्वी पर से हम को सूर्य (नक्षत्र) तथा चन्द्र एक ही परिमाण में इस तरह दिखाई देते हैं, जैसे कोई जान बूझकर समान बनाये गये हो! पर वास्तव में सूर्य चन्द्रमा से ३०० से ज्यादा गुने बड़ा है। याने सूर्य नामक नक्षत्र के परिमाण से तुलना करके देखें तो चन्द्र का परिमाण ९० हजारों में से एक हिस्सा है। साथ ही बताया जाता है कि सूर्य से दस हजार गुने और लाखों गुने परिमाणवाले नक्षत्र आसमान में हैं।

चन्द्रमा पृथ्वी से लगभग २४० हजार मीलों की दूरी पर है। कुछ वैज्ञानिक चन्द्रमा को पृथ्वी के उपग्रह के रूप में न मानकर पृथ्वी और चन्द्रमा को सूर्य के जुड़वे ग्रह मानते हैं। इसलिए यह माना जा सकता है कि पृथ्वी और चन्द्रमा का एक ही मण्डल है। नक्षत्र मण्डल नाम से कोई मण्डल कहीं नहीं है। नक्षत्र एक दूसरे से दूर-दूर पर हैं। सूर्य हमारा निकट नक्षत्र है। पृथ्वी और चन्द्रमा सूर्य के वायु मण्डल में ही हैं। सूर्य के बाद हमारे निकट रहनेवाला नक्षत्र २६ लाख करोड़ मील दूरी पर याने सूर्य से २८ लाख गुने दूरी पर है। इसलिए हमें मानना होगा कि नक्षत्र मण्डल सर्वत्र व्याप्त है।

लब्ध प्रणाशं

[६६]

राजा के प्रश्न का उत्तर कुम्हार ने यों दिया : "महाराज, मेरा नाम युधिष्ठिर है। मैं कुम्हार जाति का हूँ। यह घाव तलवार के वार का नहीं। एक बार मैं नशे में था, तब एक मिट्टी के बर्तन के ठीकरे पर गिर गया। यह दाग उसी घाव का है।"

"उफ़! मैं कैसा अविवेकी हूँ। इसके योद्धा का रूप और भयंकर घाव का दाग देख मैं धोखा खा गया हूँ।" यों सोचकर राजा ने कुम्हार को भगा दिया।

इस पर कुम्हार ने निडरतापूर्वक कहा— "महाराज! आप मुझे न भगाइयेगा। युद्ध में मेरे साहस और चालाकी की परीक्षा लीजिए!"

"तुम चाहे जैसे भी शक्तिशाली क्यों न हो, तुम्हें भगाना ही पड़ेगा। किसी कहानी में वर्णित वृत्तांत के अनुसार तुम हिम्मतवर, समस्त शास्त्रों के ज्ञाता और रूपवान भी क्यों न हो, पर तुम्हारे वंश में पैदा हुआ व्यक्ति हाथी को मार नहीं डाल सकता।" राजा ने समझाया।

"महाराज! वह कहानी कैसी?" कुम्हार के पूछने पर राजा ने यों सुनाया :

सिंहिनी के पालतू सियार की कहानी

एक जंगल में एक सिंहिनी और सिंह रहा करते थे। सिंहिनी ने दो बच्चे दिये। सिंह प्रति दिन किसी जानवर का शिकार खेलकर ले आता और सिंहिनी को आहार के रूप में दे देता था।

एक दिन सिंह सूर्यास्त तक सारा जंगल छानता रहा, पर उसे एक भी जानवर हाथ न लगा। वह अपनी गुफा को लौट रहा था। तब रास्ते में उसे एक सियार

का बच्चा दिखाई दिया। वह छोटा-सा बच्चा था, इसलिए उस पर रहम कर सिंह उसे मारे बिना मुँह में दबाये ले आया और सिंहिनी को सौंप दिया।

सिंहिनी ने पूछा–"हे प्रिय! क्या मेरे खाने के वास्ते कुछ ले आये?"

"प्रेयसी! आज इस सियार के बच्चे को छोड़ मेरे हाथ कुछ न लगा। यह भी हम जैसे नखूनोंवाला मांसाहारी है। तिस पर छोटा-सा बच्चा है। इसलिए मैंने इसे नहीं मारा। कहा जाता है कि भूख से मरते वक़्त भी स्त्रीलिंगधारी, ब्राह्मण, बच्चे तथा खासकर अपने आश्रय में आये हुए लोगों का वध नहीं करना चाहिए। मगर तुम इस वक़्त बीमार हो! इसलिए तुम्हें आहार ग्रहण करना ही होगा। इसे मारकर खा डालो। कल मैं इससे भी अच्छा जानवर लेते आऊँगा।" सिंह ने समझाया।

"प्रियतम! जब इस बच्चे को शावक मानकर तुमने नहीं मारा तो एक औरत तिस पर भी माता होकर मैं अपना पेट भरने के वास्ते इसे कैसे मार सकती हूँ? धर्म शास्त्र यही बताते हैं कि अंतिम दशा में भी निसिद्ध कार्य नहीं करने हैं और कर्तव्य से विमुख नहीं होना है। इसलिए मैं सियार के शावक को अपना तीसरा पुत्र मान लूँगी।" यों सिंहिनी ने उत्तर देकर सियार के शावक को दूध पिलाया।

सिंहिनी के बलकारी दूध पीकर सियार का शावक शक्तिशाली बना। सिंहिनी के शावक तथा सियार का बच्चा भी अपने जाति-भेद का ज्ञान पाये बिना तीनों भाई-भाई के रूप में पलकर बड़े हुए और साथ-साथ खेलने लगे।

एक दिन वे तीनों जंगल में छलांगे मारते घूम रहे थे, तब उन्हें एक जंगली हाथी दिखाई पड़ा। उसे देखते ही सिंह के शावक रोष में आकर उस पर कूद पड़े, तब सियार ने उसे रोकते हुए समझाया– "तुम लोग उसे मत छेड़ो। वह तुम्हारी

जाति का दुश्मन है।" यों कहकर वह तेजी के साथ सिंहिनी की गुफा की ओर भाग गया।

सिंह शावक भी अपने बड़े भाई के इस व्यवहार से हतोत्साहित हो हाथी को छोड़ लौट गये। इसी प्रकार शक्तिशाली नेता अपने साहस को लेकर एक सेना को उत्तेजित कर सकता है। मगर वह कायर हो भाग जाय तो बाकी सारी सेना अपना साहस खोकर भाग जाएगी।

सिंह शावकों ने घर लौटकर अपने मां-बाप से हँसते हुए जंगल का वृत्तांत बताया कि उसका भाई सियार कैसा कायर है और वह हाथी को देख घबराकर कैसे भाग आया है। इस पर सियार क्रोध में आ गया। उसके पैर लाल हो उठे, उसके ओंठ कांप उठे, इस प्रकार क्रोध में आकर उसने अपने छोटे भाइयों को खूब गालियाँ सुनाईं।

सियार का यह व्यवहार देख सिंह शावक भी क्रोध में आ गये। इसे देख सिंहिनी ने अपने पालतू सियार की रक्षा करने के हेतु नम्र शब्दों में समझाया—"बेटा, तुम्हें अपने मुँह से कभी भूल कर भी ऐसी बातें नहीं निकालनी हैं। ये तो तुम्हारे छोटे भाई हैं न?"

सिंहिनी के मुँह से शांतपूर्ण बातें सुनकर सियार और भड़क उठा और बोला—"मैं इन लोगों से साहस, बुद्धि, रूप-रेखाओं और अन्य किस बात में कम हूँ? जिसके
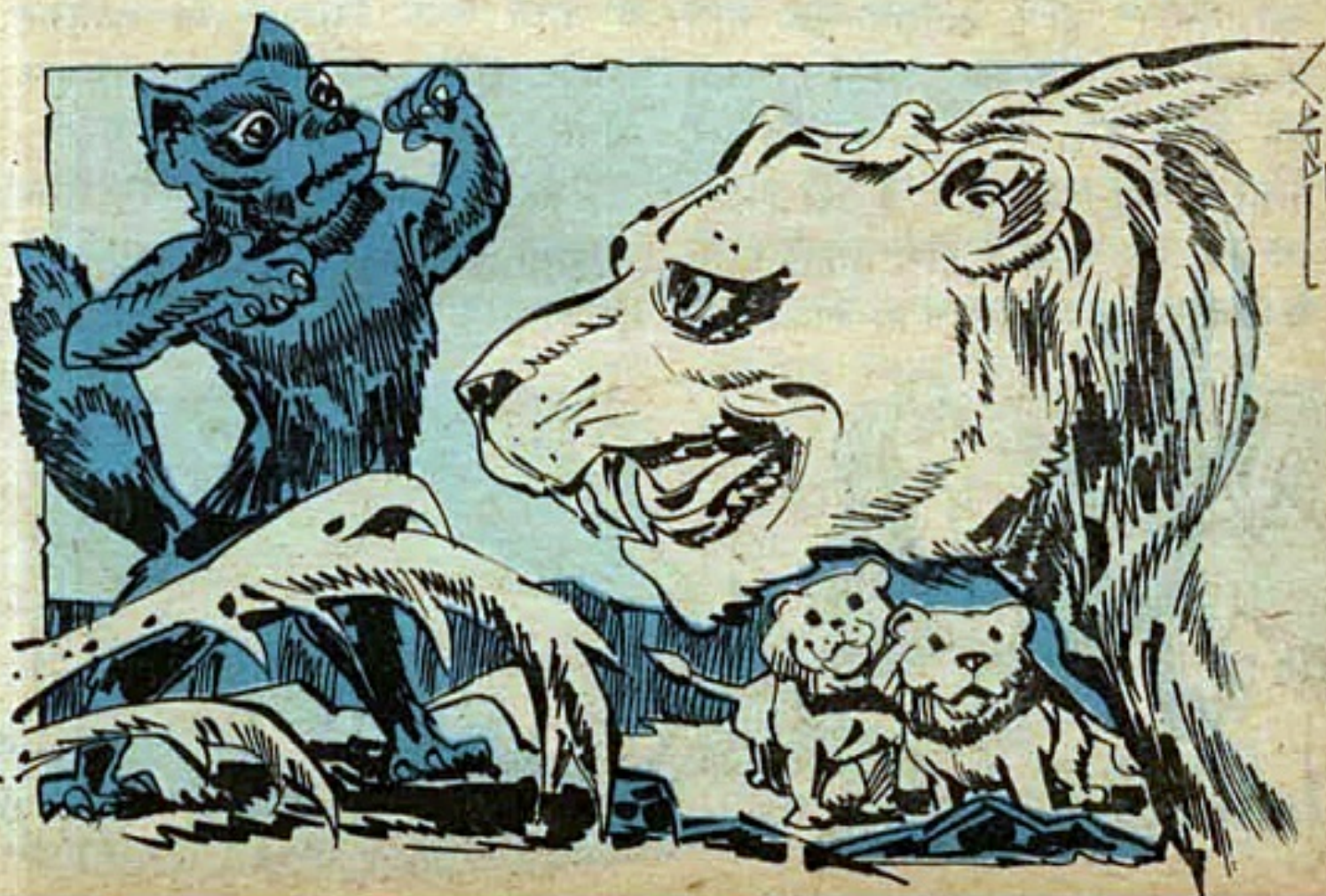
वास्ते ये मेरा मजाक़ उड़ा रहे हैं? मुझे अपने आत्म-सम्मान की रक्षा करने के हेतु इनका वध करना ही होगा। मैं इसका बदला लेकर ही रहूँगा।"

इस पर सिंहिनी अपनी हँसी को जबर्दस्ती रोकते हुए बोली—"बेटा, हो सकता है कि तुम हिम्मतवर हो! बुद्धिवान हो! सुंदर भी हो, मगर तुम्हारे वंश में पैदा हुए लोगों में से कोई भी हाथी का वध नहीं कर सकते। इसलिए तुम मेरी बातों को सावधानी से सुन लो। तुम जन्म से सियार हो। तुम्हें मैंने अपना दूध देकर पाला-पोसा और बड़ा किया। मेरे बच्चे अभी छोटे हैं, इस कारण वे समझ नहीं पाये कि तुम सिंह जाति के नहीं, सियार हो। इसलिए तुम अभी सियारों में जाकर मिल जाओ। वरना मेरे बच्चों द्वारा कभी न कभी तुम्हारे प्राणों के लिए खतरा है। मैं नहीं चाहती कि कभी मेरे बच्चों के द्वारा तुम्हारे प्राणों के लिए कोई खतरा उत्पन्न हो जाय!"

ये बातें सुन सियार जान के डर से कांप उठा और भागकर सियारों में मिल गया।

राजा ने यह कहानी सुनाकर कुम्हार को समझाया—"तुम जाति के कुम्हार हो, यह बात मेरे सैनिकों के जानने के पहले ही यहाँ से चले जाओ। वरना ये लोग तुम्हारा मजाक उड़ाकर तुम्हें मार डालेंगे।"

इस पर कुम्हार डर के मारे वहाँ से भाग गया।

बन्दर ने यह कहानी सुनाकर कहा—"मूर्ख! तुमने अपनी पत्नी के प्रेम और कृतज्ञता प्राप्त करने के वास्ते मित्र द्रोह करना चाहा। मगर एक कहानी में वर्णित ब्राह्मण की पत्नी जैसे एक कमबख्त लंगड़े के वास्ते अपने प्रियजनों को त्यागकर अपनी आधी आयु समर्पित करनेवाले पति को मारने के लिए तैयार हुई थी।"

"वह कैसी कहानी है?" मगर मच्छ के पूछने पर बन्दर ने वह कहानी यों सुनाई:

भल्लूक मांत्रिक

[६]

[चन्द्रशिला नगर पर हमला करने गये हुए राजा दुर्मुख पर भल्लूक मांत्रिक ने बधिक भल्लूक को उकसाया। इसे देख दुर्मुख अपने एक अंग रक्षक के साथ घोड़े पर सवार हो जंगल में भाग खड़ा हुआ, तब नागमल्ल नामक एक लुटेरे दल के नेता ने उसे फंदे में फंसाकर डालों पर खींचा। बाद...]

दो डाकू जब भयंकर रूप से चिल्लाते पेड़ों की डालों में से राजा दुर्मुख के घोड़े के आगे कूद पड़े, तब राजा दुर्मुख के अंग रक्षक ने घोड़े की लगाम को कसकर खींचते हुए कांपकर कहा— "महाशयो, मेरी कमर में तलवार ज़रूर लटक रही है, मगर मैं इस वक़्त असहाय हूँ, मेरे द्वारा आप लोगों की कोई हानि न होगी।"

डाकुओं का नेता नागमल्ल अपने बायें हाथ से घोड़े की लगाम कसकर पकड़कर दायें हाथ की तलवार को अंग रक्षक के कंठ की ओर बढ़ाकर बोला—"अबे, तुम सचमुच तलवार खींच देते, तब भी हम डरनेवाले नहीं हैं। लो, तुम्हारे आगे जानेवाला घुड़ सवार पेड़ों की डालों में लटक रहा है। तुम दोनों के साथ क्या कुछ और लोग इधर चले आ रहे हैं?"

अंग रक्षक सोच रहा था कि इसका क्या उत्तर दे। वह यह निर्णय न कर पाया कि अगर यह कह दे कि उनके थोड़े अनुचर पीछे चले आ रहे हैं, तब क्या यह खतरा टल जाएगा? या अपने दोनों को ही बता दे तो खतरा कम होगा, तभी राजा दुर्मुख पेड़ की डाल से लटकते हुए चिल्ला उठा—"मैं इस अपमान को सहन नहीं कर सकता। अरे अंग रक्षक! तुम कहाँ हो?"

अंग रक्षक जवाब देने ही जा रहा था, तभी नागमल्ल तलवार चमकाते धमकी भरे स्वर में बोला—"तुम अंग रक्षक हो? किस प्रकार के अंग रक्षक हो? तुम्हारे राजा कौन हैं? तुम लोग किस देश के निवासी हो? बता दो। पर इससे पहले तुम घोड़े से उतर जाओ।"

अंग रक्षक घोड़े से उतर पड़ा। तब राजा को डालों से छुड़ाने में परेशान होनेवाले डाकू से नागमल्ल बोला—"अरे, हमारे हाथ आज बड़े पैसेवाले लगे हैं। हमारी पाँचों उंगलियाँ घी में हैं। रेशमी वस्त्र पहने हुए उस आदमी को सावधानी से इस तरह उतारो, जिससे उसकी कमर टूट न जाय!"

डालों पर से डाकू ने दुर्मुख को धीरे से जमीन पर उतार दिया। तब दुर्मुख अपनी कमर में कसे रस्से को खोलने को हुआ। इस पर नागमल्ल की बगल में खड़े एक और डाकू ने दुर्मुख के समीप जाकर कठोर स्वर में कहा—"क्या तुम कमर में कसे रस्से को अपने कंठ में कसना चाहते हो? जल्दबाजी मत करो। तुम अगर अपना सच्चा परिचय न दोगे तो हम लोग खुद यह काम करेंगे।"

इस बीच वहाँ पर पेड़ पर से उतरकर डाकू और नागमल्ल भी आ पहुँचे। नागमल्ल ने राजा को एक बार एड़ी से चोटी तक परखकर कहा—"तुम्हारी क़ीमती पोशाकें और नक्काशी की गई तलवार के

म्यान को देखने से लगता है कि तुम खूब पैसेवाले हो! अभी तुम कुछ गड़बड़ किये बिना अपने सारे पैसे चुपचाप वहाँ रख दो, तब तुम अपने अंग रक्षक को घर भेजकर दस हज़ार सिक्के मँगवा दो। वरना तुम्हारी जान की खैर नहीं। तुम्हारी लाश सामनेवाली पहाड़ी गुफाओं में निवास करनेवाले किसी बाघ या भेड़िये का आहार बन जाएगी।"

ये बातें सुन राजा दुर्मुख ने भांप लिया कि वह खतरे में फँस गया है। वह सोचने लगा—"यदि वह अपने को अमुक देश का राजा बतला दे तो डाकुओं का नेता उसी वक़्त उसका सर काटकर बहुत बड़ा पुरस्कार पाने के वास्ते उसे चन्द्रशिला नगर के राजा जितकेतु के पास ले जाकर उसे सौंप सकता है। ऐसा न होकर अपने को कोई संपन्न व्यापारी बतलाकर झूठ कहे तो अपने अंग रक्षक के द्वारा दस हज़ार सिक्के घर से माँगने पड़ेंगे। इस बीच अगर उसके झूठ बोलने की बात खुल जायगी तो..."

राजा दुर्मुख यों सोचते डाकुओं के नेता के सवाल का सही जवाब दे नहीं पा रहा था। तब डाकुओं का नेता क्रोध में आकर दांत भींचते तल्वार खींचकर बोला—"तुम सोच क्या रहे हो? क्या कोई युक्ति करके यहाँ से भागने की योजना तो नहीं बना रहे हो?"

इसके उत्तर में दुर्मुख ने कहा—"मैं यही बात सोच रहा हूँ कि दस हज़ार सिक्के कैसे मँगवा दूं? मेरा नाम दुर्जय गुप्त है, मैं उदयगिरि का निवासी हूँ। मगर इस वक़्त मेरे हाथ में एक कौड़ी भी नहीं है।"

यह जवाब सुनकर नागमल्ल विस्मय में आकर बोला—"ओह ऐसी क़ीमती पोशाकें पहनकर अंग रक्षक को भी साथ रखकर इस जंगल में बिना एक कौड़ी हाथ में लिये यात्रा कर रहे हो? क्या तुम्हारी ये बातें यक़ीन करने लायक़ हैं?" फिर अपने अनुचरों की ओर मुड़कर बोला—"सुनो,

इसकी कमर के रस्सों को खोल कंठ में कस दो, इस बीच मैं ढूंढ़ लेता हूँ कि इसे फांसी पर चढ़ाने के लिए कौन सी डाल मज़बूत होगी?"

नागमल्ल की बात पूरी न हो पाई थी कि कहीं दूर पर हाथी के चिघाड़ के साथ भल्लूक की चिल्लाहट भी सुनाई दी। दूसरे ही क्षण राजा दुर्मुख और उसका अंग रक्षक उस चिल्लाहट को सुनकर आपाद मस्तक कांप उठे। अंग रक्षक ने चारों तरफ़ नज़र दौड़ाकर कहा–"महाराजा, मैंनें सोचा था कि बधिक भल्लूक इस जंगल में कहीं रास्ता भटक गया है। लेकिन अब ऐसा मालूम होता है कि वह हमारे निशानों का पता लगाते इसी ओर चला आ रहा है।"

डाकुओं का नेता विस्मय में आ गया। उसने अपने अनुचरों की ओर आश्चर्यभरी दृष्टि दौड़ाकर कहा–"तुम लोगों ने इनकी बातें सुन ली हैं? यह तो अपना नाम दुर्जय गुप्त बता रहा है और दूसरा तो इसे महाराजा पुकारता है? सब से बड़ी विचित्र बात तो बधिक भल्लूक... उसका इस जंगल में रास्ता भटक जाना!" यों कहकर नागमल्ल ने तलवार उठाकर पूछा–"अबे, सच सच बताओ, तुम दोनों बावरे हो या बेतुकी बातें करके हम को बुद्धू बनाना चाहते हो?"

राजा दुर्मुख घबरा गया। वह सोच ही रहा था कि इस बार कौन सा उत्तर दे, तभी अति निकट हाथी का चिंघाड़ और बधिक भल्लूक की चिल्लाहटें सुनाई दीं। इस पर नागमल्ल भी घबड़ा गया। अपने अनुचर से बोला–"अरे, सुनो, तुम पेड़ पर चढ़कर देख लो! एक ही साथ हाथी का चिघाड़ और भालू की कंठ ध्वनि जैसी मनुष्य की यह चिल्लाहट कैसी? शायद इनकी बातों में कोई सचाई हो!"

डाकुओं में से एक जल्दी-जल्दी पास के एक पेड़ पर चढ़ गया। दूसरे ही क्षण चीख उठा–"मल्लू, उस दुर्जय गुप्त और

उसके नौकर का कहना बिलकुल सच है। सूंड कटी एक हाथी और उस पर परसु धारण किया हुआ भल्लूक–अरे रे, उस परसु के वार से पेड़ों की डालें तिनकों के समान कटकर तितर-बितर हो रही हैं।"

नागमल्ल ये बातें सुन भय और संभ्रम के साथ सोचने लगा कि अब क्या किया जाय, तभी राजा दुर्मुख उसका हाथ पकड़कर बोला–"मल्ल, हमें जल्दी यहाँ से भाग जाना उचित होगा! धन के लोभ में पड़कर तुम हमारी जानों की बलि मत दो। तुम चाहोगे तो मैं अपने घर के धन से तुम्हारे वास्ते एक राज्य ही खरीदकर दे सकता हूँ।"

अंग रक्षक ने घोड़े पर सवार हो भागने की युक्ति की। लगाम थामकर नागमल्ल से बोला–"नागमल्ल! इस वक़्त अगर तुम महाराजा के प्राणों की रक्षा करोगे तो वे तुम्हें अपना आधा राज्य दान कर देंगे। मैं घोड़े पर सवार हो राजधानी में जाकर सेना को साथ ले लौट आऊँगा। महाराज! क्या यह उचित होगा?"

"यह काम तो मैं खुद कर सकता हूँ। मगर इस घने जंगल में राजधानी का रास्ता मालूम नहीं हो रहा है न?" ये शब्द कहते राजा दुर्मुख ने घोड़े की लगाम थाम ली।

नागमल्ल ने अपने दो अनुचरों को आँख का इशारा कियां, तब दुर्मुख और अंग रक्षक की ओर लाल लाल आँखों से देख बोला–"अबे, तुम दोनों क्या बुद्धू हो या दगा देने में प्रवीण हो? इधर वह बधिक भल्लूक हमला करने जा रहा है और तुम लोग कहीं दूर पर स्थित राजधानी में जाकर सेना को ले आना चाहते हो?" फिर अपने अनुचरों की ओर मुखातिब हो बोला–"अबे, इन दोनों को रस्सों से बांधकर उन पहाड़ी गुफाओं की ओर खींच लाओ। उस बधिक भल्लूक के यहाँ से निकल जाने के बाद इन लोगों का सही पता लगायेंगे।"

गये। बधिक भल्लूक गुफा के समीप पहुँचा ही था कि उन लोगो ने गुफा के मुहाने पर एक बड़ी चट्टान ढक दी। मगर भीतर जान के डर से थर-थर कांपने लगे।

बधिक भल्लूक ने गुफा के सामने जाकर एक-दो बार जोर से चट्टान पर लात मार दी, तब चिल्ला उठा–"अबे, गुफा के अन्दर रहनेवालो, तुम सब बाहर आ जाओ! मुझे सिर्फ़ दुर्मुख का सर चाहिए। बाक़ी लोगों की मैं जरा भी हानि नहीं करूँगा।"

यह चिल्लाहट सुनकर नागमल्ल अपने अनुचरों से बोला–"वाह, यह तो, खूब रहा! वह पिशाच भालू राजा दुर्मुख का सिर चाहता है। यह गड़बड़ झाला क्या है?" फिर दुर्मुख से बोला–"इस प्रदेश के समीप में स्थित उदयगिरि राज्य पर दुर्मुख नामक राजा शासन करते हैं। मैं जंगलों को छोड़ विचित्र दृश्य देखने के लिए नगरों में जानेवाला व्यक्ति नहीं हूँ। इसलिए मैंने उस राजा को आज तक कभी नहीं देखा है। कहीं आप ही वह दुर्मुख राजा तो नहीं।"

"मैं दुर्जय गुप्त हूँ। उदयगिरि का निवासी हूँ। किसी पिशाच के प्रभाव में आया हुआ उस भालू की बातों पर यक़ीन

नागमल्ल यों आदेश देकर गुफाओं की ओर चल पड़ा, तब उसके अनुचर राजा दुर्मुख और अंग रक्षक को रस्सों से बांधकर उसके पीछे खींचते ले जाने लगे। वे लोग एक भारी गुफा के समीप पहुँचने ही वाले थे कि बधिक भल्लूक पेड़ों की ओट में से हाथी पर उसी ओर बढ़ते दुर्मुख को देख गरज उठा–"अरे दुष्ट! तुम मेरे हाथों में पड़ गये। मैं अपने परसु की तुम्हारी बलि देने जा रहा हूँ।" यों कहते हाथी पर से कूदकर उनका पीछा करने लगा।

नागमल्ल और अन्य सभी लोग भय कंपित हो दौड़ते जाकर एक गुफा में घुस

क्यों करते हो? हम लोगों के यहाँ से जान बचाकर भाग जाने का कोई उपाय सोच लो। तुमने जो दस हज़ार सिक्के माँगे, मैं दे दूंगा।" दीनतापूर्ण चेहरा बनाकर राजा दुर्मुख ने कहा।

"नागमल्ल! महाराजा ने आज तक अपने वचन का भंग नहीं किया है।" अंग रक्षक ने कहा।

"अरे कमबख्त! चुप रहो। तुम पर कोई पिशाच तो सवार नहीं है? जब से मैं इस जंगल में पहुँचा हूँ, तब से तुम मुझे लगातार 'महाराजा' 'महाराजा' पुकारते हो! मैं सब के सामने तुम्हारा शिरच्छेद करा सकता हूँ। खबरदार!" दुर्मुख ने डांट बताई।

डाकू नागमल्ल चौंक पड़ा और अपने दो अनुचरों से बोला-"अरे लगता है, खुश क़िस्मती या बद क़िस्मती से ही सही, हम लोगों ने उदयगिरि के राजा दुर्मुख को पकड़ लिया है। राजा को छोड़ और किसे खुले आम शिरच्छेद कराने का हक़ है? इस दुर्जय गुप्त ने भूल से यों सचमुच अपना परिचय दे दिया है।"

राजा दुर्मुख को अब दो प्रकार का डर सताने लगा। एक तो गुफा के बाहर चट्टान को हटाने की कोशिश करनेवाले बधिक भल्लूक का और भीतर के डाकुओं

का। उसने कोई चेतावनी देने का अभिनय करते बगल में खड़े अंग रक्षक पर कुहनी चलाकर कहा-"नागमल्ल! तुम मेरे बारे में किसी भ्रम में फंस गये हो। मैं सचमुच दुर्जय गुप्त हूँ। इस भयंकर जंगल में प्रवेश करने के मिनट से लेकर मेरा नौकर पागल से हो अंट संट बकता जा रहा है। लगता है कि कोई दुष्ट ग्रह इसके शरीर के अंदर प्रवेश कर गया है।"

"महाराजा! क्षमा कर दीजिए! बस, बस, यही बात है!" जोर से कराहते हुए अंग रक्षक ने कहा।

नागमल्ल ने अपना सिर थामे कहा-"इस हालत में तुम चाहे राजा हो या

दुर्जय गुप्त! मेरा कुछ भला होनेवाला नहीं है। वह भयंकर भल्लूक गुफा की चट्टान को हटाकर परसु से हम सब के सर काटने जा रहा है।" फिर अपने अनुचरों से नागमल्ल ने कहा–"अबे, हमें अगर मरना ही है तो किसी भी तरह से मर जायेंगे। इसलिए हम्हीं लोग पहले चट्टान को हटाकर उस बधिक भल्लूक पर वार करे तो कैसा होगा?"

डाकू अपने नेता के सवाल का जवाब देने जा रहे थे, तभी अंग रक्षक ने दखल देकर कहा–"नागमल्ल! उस बधिक भल्लूक की सृष्टि भल्लूक मांत्रिक ने की है। उसकी शक्ति राक्षस के बराबर की है। इसलिए हमें इस गुफा के अन्दर रहना ही ज्यादा हितकर होगा।"

उसकी बात पूरी न हो पाई थी कि भल्लूक बधिक अपने दोनों हाथों से चट्टान को थोड़ा अलग खिसकाकर गुफा के भीतर झांकते बोला–"अरे राजा दुर्मुख! बाहर आ जाओ! तुम्हारा सर काटकर मैं अपने रास्ते चला जाऊँगा।"

"ओह! अब मुझे मालूम हो गया। यह भल्लूक राजा दुर्मुख उर्फ़ दुर्जय गुप्त से ही बदला लेना चाहता है। हम लोग बच गये। इसको पकड़कर गुफा के बाहर ढकेल दो।" डाकुओं के नेता ने आदेश दिया।

दोनों डाकू राजा दुर्मुख के कंधे पकड़ कर गुफा के बाहर ढकेलने की कोशिश में लगे थे, तभी गुफ़ा के थोड़ी दूर पर से यह भीकर कंठ ध्वनि सुनाई दी–"मैं तभी से देखता हूँ, यह कैसा शोरगुल है? क्या तुम लोग यह नहीं जानते कि बगल की गुफा में महा राक्षस उग्रदण्ड निवास करते हैं?"

दूसरे ही क्षण बधिक भल्लूक राक्षस की ओर बढ़ते गरज उठा–"अबे, तुम राक्षस हो? तुम्हारा नाम उग्रदण्ड है? भल्लूक मांत्रिक का मंत्र पूरित यह परसु तुम्हारा कंठ काटने जा रहा है।" (और है)

लोभ का फल

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, में नहीं जानता कि आप किस लक्ष्य को साधने के लिए साधन के रूप में इस शव को ढोकर ले जा रहे हैं, लेकिन जब साधन उत्तम नहीं होते, तब साध्य की प्राप्ति नहीं होती। इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को धर्मदास की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों कहने लगा–"प्राचीन काल में एक महा नगर में धर्मदास और गंगादास नामक दो डाकू रहा करते थे। दोनों ने डाके डालकर खूब धन कमाया। पर गंगादास अपने हिस्से का धन सुरक्षित रखकर सुखपूर्वक अपने दिन बिताया करता

बेताल कथाएँ
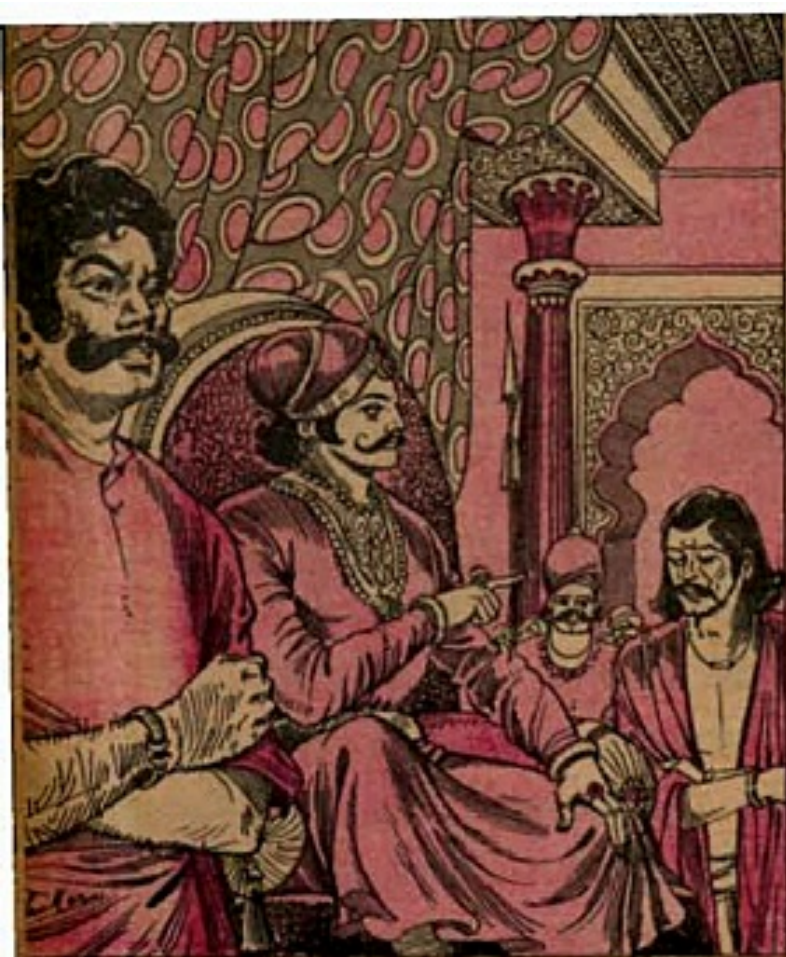
आखिर राजा के सामने उन डाकुओं की चोरियाँ एक जटिल समस्या बन गईं। डाकुओं को पकड़ने के सारे प्रयत्न बेकार साबित हुए। इस पर राजा ने ढिंढोरा पिटवाया कि चोरों का जो पता बतायेगा, उसे एक हज़ार सोने के सिक्के दिये जायेंगे। ढिंढोरा सुनने पर गंगादास के मन में यह विचार आया कि यदि वह राजा के पास जाकर धर्मदास का पता बतला दे तो उसे न केवल एक हज़ार सोने के सिक्के हाथ लगेंगे, बल्कि भविष्य में वह जो चोरियाँ करेगा, उसमें से धर्मदास को हिस्सा देने की ज़रूरत नहीं रहेगी।

इस विचार के आते ही गंगादास ने राजा के पास जाकर बताया कि ये सारी चोरियाँ करनेवाला व्यक्ति धर्मदास है और साथ ही उसके घर का पता भी बता दिया। राजा ने सिपाहियों को भेजकर धर्मदास को बन्दी बनवाया। धर्मदास ने स्वीकार कर लिया कि उसने कई चोरियाँ की हैं। राजा ने उसकी सुनवाई के लिए एक तारीख निश्चित की और तब तक उसे कारागार में बन्दी बनाने का आदेश दिया।

इस घटना के दो-चार दिन बाद राजा को यह खबर मालूम हुई कि कहीं धर्मदाता का पता नहीं है। सराय का अन्नदान बंद है। इस समाचार के मिलते ही राजा ने

था। लेकिन धर्मदास अपने हिस्से के धन से एक धर्मशाला स्थापित करके गरीबों में अन्नदान करते हुए साधु के वेष में सारा दिन सराय में बिताया करता था।

धीरे-धीरे साधु का यश सारे देश में फैल गया। राजा के कानों में भी यह खबर पड़ी। इस पर राजा ने साधु को अपने दरबार में बुला भेजा और उसकी दानशीलता की प्रशंसा करके उसे "धर्मदाता" नामक उपाधि भी दी।

कोई यह नहीं जानता था कि धर्मदाता एक नामी डाकू और लुटेरा है। गंगादास को भी इस बात का पता न था कि धर्मदाता उसका साथी डाकू है।

धर्मशाला में अन्नदान को बेरोकटोक चलाने का उचित प्रबंध किया।

इस घटना के साथ राजा को पता चला कि धर्मदास कारागार में बन्दी है, फिर भी चोरियाँ बराबर होती जा रही हैं। इस ख़बर के मिलते ही राजा ने सिपाहियों को भेजकर गंगादास को बुला भेजा और कहा–"धर्मदास की सुनवाई के वक़्त तुम्हारी गवाही की बड़ी जरूरत है। तुम भी तब तक क़ैद में रहो। धर्मदास की सुनवाई खतम होकर उसे सजा देने के बाद में तुम्हें एक हज़ार सोने के सिक्के देकर तुम को कारागार से मुक्त करूँगा।"

फिर क्या था, गंगादास कारागार में भेजा गया। मगर कई दिन बीत गये, पर धर्मदास की सुनवाई नहीं हुई। इस प्रकार एक महीना बीत गया। चोरियाँ भी एक दम बंद हो गईं। आखिर एक दिन राजा ने धर्मदास को कारागार से मुक्त करके उसको खासी अच्छी तनख्वाह पर धर्मशाला के न्यासी के रूप में नियुक्त किया।

पर गंगादास कारागार में ही रह गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन, राजा के इस निर्णय का अर्थ क्या है? धर्मदास ने मान लिया था कि वह चोर है, फिर भी उसकी सुनवाई किये बिना राजा ने उसे कारागार से मुक्त करके सराय के न्यासी के रूप में क्यों नियुक्त किया? धर्मदास को पकड़ानेवाले

गंगादास को आजीवन कारागार का दण्ड क्यों दिया? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो आप का सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "राजा बड़ी प्रखर बुद्धिवाले हैं। उनके मन में इस संदेह के पैदा होने की आवश्यकता बिलकुल नहीं है कि धर्मदास ही चोर है! मगर इसके पर्याप्त सबूत हैं कि धर्मदास ही धर्मदाता हो सकता है! क्योंकि धर्मदास को बन्दी बनाते ही धर्मदाता गायब हो गया। साथ ही राजा को इस बात का पता लगा होगा कि बड़े-बड़े डाके डालनेवाले धर्मदास का मकान अत्यंत साधारण है। पर गंगादास यदि धर्मदास के दल का डाकू न होता तो उसे यह खबर कैसे मालूम हुई कि धर्मदास एक डाकू है। अलावा इसके गंगादास वैभवपूर्ण जीवन बिता रहा है। सब से बड़ी उसकी मूर्खतापूर्ण बात तो यह कि धर्मदास के बन्दी बनने के बाद भी उसने डाके डालना चालू रखा। इस प्रकार राजा को गंगादास के व्यवहार का पूर्ण रूप से पता चल गया। इसलिए अलग से उसकी सुनवाई करने की ज़रूरत नहीं रह गई। अब रही धर्मदास की बात! धर्मदास डाकू जरूर है। मगर वह सब प्रकार से योग्य व्यक्ति है। उसने डाका डालकर जो कुछ कमाया, वह सारी संपत्ति सराय चलाने के पीछे खर्च किया और आप साधु की सी जिंदगी बिताई। जब वह बन्दी बना, तब उसने गंगादास का नाम प्रकट नहीं किया। गंगादास जैसे वह मित्र-द्रोही भी नहीं है। अगर राजा सराय चलायेंगे तो धर्मदास डाका नहीं डालेगा। ये सारी बातें सोचकर राजा ने धर्मदास को उसके योग्य ओहदे पर नियुक्त किया। इस प्रकार राजा ने जो निर्णय लिये, वे सब प्रकार से सही हैं।"

इस प्रकार राजा के मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

पत्नियों का प्रभाव

रामनाथ और सोमनाथ दो भाई हैं। बड़ा भाई सोमनाथ बड़ा आलसी है। वह कोई काम-वाम करता न था। रामनाथ खेत का काम करके धन कमा लेता था, जिससे उनका संयुक्त परिवार चल जाता था।

सोमनाथ की पत्नी बड़ी अक़्लमंदी थी। वह अपने पति से अकसर कहा करती थी–"छोटा भाई मेहनत करके कमाता है तो बैठे-बैठे खाने में तुम्हें लज्जा नहीं होती? तुम भी खेत के काम क्यों नहीं करते?"

उधर रामनाथ की पत्नी को यह अच्छा न लगा कि उसका पति जी तोड़ मेहनत करे और उसका जीजा बैठे-बैठे खाते रहे, उसने अपने पति से कहा–"तुम अकेले मेहनत करके अपनी तबीयत ख़राब क्यों करते हो? तुम भी मजे में बैठकर क्यों नहीं खाते?"

कालांतर में दोनों भाइयों पर अपनी पत्नियों का प्रभाव पड़ा। सोमनाथ अपने आलसीपन पर लजा गया और खेत का काम संभालते जल्द ही वह एक कुशल किसान बन बैठा।

पर रामनाथ आरामतलबी बनकर मेहनत को तिलांजली दे सुस्त बन बैठा।

विश्वास की दवा

एक गांव में रामशास्त्री नामक एक देशी वैद्य था। वह जड़ी-बूटी की मदद से पुरानी बीमारियों को बात की बात में दूर कर देता था। इस वजह से आस-पास के गाँवों में रामशास्त्री का नाम खूब फैल गया। रामशास्त्री पैसों के पीछे पागल न था, वह जनता को निरोग बनाना ही अपना लक्ष्य मानता था। फिर भी उसकी अच्छी खासी आमदनी हो जाती थी। क्योंकि उसके पास जानेवाले रोगियों की तादाद काफी बड़ी थीं।

रामशास्त्री के गोविंद नामक एक पुत्र था। रामशास्त्री का विचार था कि गोविंद को भी अपने ही समान एक नामी वैद्य बना ले। लेकिन गोविंद के मन में अपने पिता की कमाई के प्रति आदर का जो भाव था, वह उसके इलाज के प्रति न था। क्योंकि गोविंद का विचार था कि जड़ी-बूटियों का इलाज़ साधारण है, वह शास्त्रीय चिकित्सा नहीं है। इस कारण से जब उसके पिता ने उसे जड़ी-बूटियों की चिकित्सा जानने की सलाह दी, तब गोविंद ने साफ़ बता दिया कि वह शहर में जाकर शास्त्रीय वैद्य विद्या प्राप्त करेगा। राम शास्त्री ने इस विचार से अपने पुत्र को शहर में भेजा कि उसका पुत्र शास्त्रीय चिकित्सा का ज्ञान प्राप्त करेगा तो उसके इलाज में भी चार चांद लग जायेंगे।

उधर शहर में जाकर गोविंद जैसे-तैसे विद्या पूरा करके घर लौट आया।

रामशास्त्री ने गोविंद को अपने से भी एक बड़े वैद्य के रूप में सब को परिचय कराया और उसके पास जो रोगी आते थे, उन्हें भी गोविंद के यहाँ इलाज कराने की सलाह देने लगा। लेकिन रामशास्त्री ने जल्द ही यह जान लिया कि गोविंद रोग

हेमंतकुमार जोशी

निदान में थोड़ी-सी भी निपुणता नहीं रखता, उल्टे भयंकर बीमारियों से पीड़ित रोगियों को उसके यहाँ भेजना खतरे से खाली नहीं है। इस प्रकार रामशास्त्री की आँखें खुल गईं। पर उस हालत में भी गोविंद यही मानता था कि उसका पिता शास्त्रीय वैद्य शास्त्र की थोड़ी सी भी जानकारी नहीं रखते, कोई जड़ी-बूटी का इलाज करके उसके यश में बाधा डाल रहे हैं। एक दिन यह बात अपने पिता से स्पष्ट बताई और यहाँ तक सलाह दी कि वह देशी इलाज करना छोड़ दे।

रामशास्त्री को लगा कि अण्डा जाकर चूजे का मजाक़ उड़ा रहा है! उसने बताया–"बेटा! तुम ठीक कहते हो! मेरा इलाज इन देहातियों के लिए सही बैठता है। तुम जैसा शास्त्रीय ज्ञान रखनेवाला वैद्य शहर में शोभा पाता है। इसलिए तुम शहर में जाकर अपना पेशा चालू रखो।"

गोविंद को भी यह बात सही मालूम हुई। मगर शहर में पहुँचते-पहुँचते गोविंद बीमार पड़ गया और उसका रोग बढ़ता गया। रामशास्त्री ने अपने बेटे की बीमारी का इलाज करने की भर सक कोशिश की, लेकिन उसका कोई असर नहीं हुआ। एक महीना बीत गया। तब रामशास्त्री ने खूब सोच-विचार कर अपने एक शिष्य समर को बुला भेजा जो रामशास्त्री के यहाँ वैद्य-विद्या सीखकर किसी दूर के गाँव में इलाज किया करता था। समर ने गोविंद का इलाज किया।

आश्चर्य की बात थी कि समर के इलाज से गोविंद बहुत जल्द चंगा हो गया। इस पर ग्रामवासियों को यह विचित्र सा प्रतीत हुआ कि रामशास्त्री जैसे नामी वैद्य के द्वारा इलाज करने पर भी जो बीमारी एक महीने में भी दूर न हो पाई, वह किसी अनाम वैद्य समर के इलाज से बात की बात में गायब हो गई। इस पर सभी देहातियों ने राम

शास्त्री के सामने ही समर के इलाज की दिल खोलकर तारीफ़ की ।

गोविंद के चंगा हो जाने पर समर अपने गाँव लौटने को तैयार हुआ । मगर रामशास्त्री ने उसे रोककर समझाया– "तुम आज से यहीं रहकर लोगों का इलाज किया करो! तुम्हारी बड़ी अच्छी खासी आमदनी होगी!"

"गुरुजी! आप जैसे कुशल वैद्य के रहते मेरी क्या पूछ होगी?" समर ने उत्तर दिया ।

"मैं कल ही इस गाँव को छोड़कर चला जा रहा हूँ ।" रामशास्त्री ने कहा ।

"गुरुजी! इस गाँव में आपको काफी यश और धन प्राप्त हो गये हैं न? ऐसी हालत में इस गाँव को क्यों छोड़कर चले जाना चाहते हैं?" समर ने पूछा ।

"वैद्य के रूप में इस गाँव में मुझे अपयश प्राप्त हो गया है । मेरे पुत्र की बीमारी के कारण मेरी दवाइयों के प्रति ग्रामवासियों का विश्वास जाता रहा है । रोगियों का अगर इलाज के प्रति विश्वास नहीं जमता है, वह काम नहीं देता ।" रामशास्त्री ने समझाया ।

"आपने जो दवाइयाँ बताईं, उन्हीं के द्वारा ही तो मैंने आपके पुत्र का इलाज किया हैं?" समर ने पूछा ।

"हाँ, तुम ठीक कहते हो! मगर मैंने जब वे ही दवाइयाँ अपने बेटे को दीं, तब उसकी बीमारी चंगी नहीं हुई । इसकी वजह यह है कि मेरे बेटे का मेरे इलाज के प्रति विश्वास न था । इसीलिए मैंने तुमको बुलवाकर तुम्हारे द्वारा इलाज कराया । इसका फल यह हुआ कि गाँववालों का मेरे इलाज के प्रति विश्वास उठ गया । तुम्हारा परिवार भी बड़ा है । मैं जहाँ भी जाऊँ, पर्याप्त धन कमा सकता हूँ!" यों समझाकर रामशास्त्री अपनी पत्नी को साथ ले किसी दूसरे गाँव में चला गया । समर ने उसी गाँव में अपना इलाज चालू रखा और थोड़े ही दिनों में यश के साथ खूब धन कमा लिया ।

चेतावनी

प्राचीन काल में आंधी-तूफ़ान के कारण एक देश में जनता और जायदाद की अपार क्षति हुई। पीड़ित प्रजा ने राजा के पास पहुँचकर मदद माँगी। मगर राजा की समझ में न आया कि कैसी मदद दी जाय! मंत्री की सलाह राजा को पसंद न आई।

राजा ने गुप्तचरों द्वारा पीड़ित लोगों की फ़ेहरिश्त मँगाई फिर गुप्तचरों को इस बात का पता लगाने भेज दिया कि उनकी आर्थिक सहायता करने पर लाभदायक होगा या धान आदि वस्तुओं की सहायता की जाय? गुप्तचरों ने थोड़े दिन बाद लौटकर बताया कि पीड़ित लोगों में से आधे लोग धन की सहायता चाहते हैं और बाक़ी लोग धान आदि वस्तुओं की सहायता। इस पर भी राजा कोई निर्णय न ले सका। इसका निर्णय लेने के लिए राजा ने एक समिति का गठन किया। उस समिति ने धन सहायता देने की सिफ़ारिश की। राजा ने पीड़ित लोगों की भारी पैमाने पर आर्थिक सहायता पहुँचा दी।

इसके बाद राजा ने अपना वेष बदलकर देशाटन करके जनता की राय जान ली और लौटकर क्रोध में आकर मंत्री से कहा–"जनता तो कृतघ्न है। वे हमारी तारीफ़ तक नहीं करतीं। आंधी-तूफ़ान के कम होने पर किसी सोमगुप्त ने अन्नदान किया है। बार-बार लोग उसी का नाम ले रहे हैं। उसी का यश गाते हैं।" मंत्री ने धीरे से कहा–"महाराजा, विपत्ति के समय जो सहायता दी जाती है, उसी की गणना होती है।"

बच्चों का खेमा

शांतिवन नामक गाँव में श्रीपति और भूपति नामक दो धनी व्यक्ति रहा करते थे। एक जमाने में दोनों के बीच गहरी दोस्ती थी, लेकिन गाँव की राजनीति ने उन्हें जानी दुश्मन बना लिया।

शांतिवन से चार मील की दूरी पर कालीपट्टणम नामक एक गाँव था, जहाँ हर साल एक बड़ा मेला लगता था। उस मेले में हर साल श्रीपति और भूपति ज़रूर जाया करते थे। उस साल मेले से लौटते वक़्त भूपति को मार डालने का श्रीपति ने और श्रीपति का वध करने का भूपति ने निश्चय कर लिया और इसके लिए योजनाएं भी बना लीं।

मेले में जाने के रास्ते में एक बहुत बड़ा बरगद का पेड़ था। लौटते वक़्त वहाँ पर पहुँचते-पहुँचते अंधेरा हो जाता था। श्रीपति जब वहाँ पर पहुँचे, तब उसका वध करने के लिए भूपति ने अपने अनुचरों को नियुक्त किया। बरगद के इस ओर तालाब की मेंड़ के नीचे अपने अनुयायियों को नियुक्त कर उनके द्वारा भूपति को मरवा डालने की श्रीपति ने योजना बनाई।

उस वर्ष मेला बड़े ठाठ से लगा। मेले का विशेष आकर्षण बच्चों का खेमा था! वह नाम के वास्ते बच्चों का खेमा था, पर उसमें बड़ों को ही प्रवेश करने देते थे। उस खेमे के सामने विचित्र वेष धारण कर एक बूढ़ा खड़ा था। वास्तव में वह कई सिद्ध विद्याओं की जानकारी रखनेवाला मांत्रिक था। वह बड़े लोगों का स्वागत करते ऊँची आवाज़ में चिल्ला रहा था—"इस डेरे में प्रवेश कर कभी अपने भूले हुए बचपन के आनंद को फिर से लूटिए!"

लक्ष्मीकांत यादव

डेरे के भीतर से बाहर लौटनेवाले ठहाके मारते निकल रहे थे! श्रीपति ने सोचा कि डेरे के भीतर ऐसा आनंद देनेवाली कौन-सी चीज़ है, देख तो ले! इस कुतूहल को लेकर अपनी पत्नी के साथ डेरे के भीतर चला गया और दस वर्ष का बालक बन गया। थोड़ी देर बाद भूपति भी अपनी औरत के साथ डेरे में पहुँच कर वह भी दस साल का लड़का बन बैठा। उनकी औरतें पांच-छे साल की लड़कियाँ बन बैठीं, मगर अपने परिचित बच्चों को न पाकर वे बाहर चली आईं और मामूली औरतें बन गईं।

श्रीपति और भूपति ने अपनी औरतों को तो नहीं पहचाना, लेकिन एक दूसरे को पहचान कर गले लगे और डेरे में रहनेवाले अन्य बच्चों के साथ काफी देर तक खेलते रह गये। वहाँ पर बच्चों के खेलने के लिए आवश्यक झूले, फिसलन की चट्टानें वगैरह कई चीज़ें थीं। श्रीपति और भूपति ने उन सभी खेलों में भाग लिया।

उस वक़्त वे दोनों दिली दोस्त थे। एक ही स्कूल में पढ़ते साथ-साथ खेलते-कूदते थे। एक बार श्रीपति तैरना न जानने की वजह से तालाब में डूब रहा था, उस वक़्त तैरना जाननेवाले भूपति ने आकर उसकी जान बचाई थी। एक बार भूपति के पैर में मोच आ गई, जिससे वह हिलने की स्थिति में न था। तब श्रीपति उसे चार पाँच कोस अपने कंधे पर घर

तक उठा लाया था। ऐसी कई बातें उन दोनों ने अब याद कीं।

डेरे से बाहर निकलते ही वे दोनों बड़े आदमी बन गये। मगर उनके दिल विचित्र रूप में बदल गये। डेरे के भीतर उनकी जो मानसिक स्थिति थी, वह बाहर आने पर भी बनी रही। उनकी औरतें पहले ही बाहर आकर उनके इंतज़ार में खड़ी थीं। लेकिन उन्हें अपनी औरतों की अब ज्यादा फ़िक्र न थी। एक दूसरे का वध करने के लिए दोनों ने लौटती यात्रा में योजनाएँ बना ली थीं। अब उन्हें वे अमल नहीं कर सकते थे। क्यों कि इस वक़्त वे दोनों दिली दोस्त थे। ऐसी हालत में एक दूसरे की जान लेना कैसे संभव था!

उस वक़्त अंधेरा फैल रहा था। श्रीपति ने अपनी पत्नी को अपने परिचित व्यक्तियों की गाड़ी में बिठाया, उनके साथ घर लौटने की बात कहकर वह भूपति से कहे बिना तेजी के साथ बरगद के पेड़ की ओर चल पड़ा। वास्तव में भूपति श्रीपति को पहचानने की स्थिति में न था। उसने भी अपनी औरत को गाड़ी में बिठा दिया और आप तेजी के साथ पैदल चल पड़ा।

भूपति हांफते-हांफते बरगद के निकट पहुँचा और अपने अनुचरों को वहाँ से भेज दिया। इसी प्रकार उधर श्रीपति ने भी तालाब के मेंड के पास भूपति का वध करने का इंतज़ार करनेवाले अपने साथियों को भिजवा दिया।

आखिर वे दोनों मित्र सकुशल घर पहुँचे। दोनों ने जब अपनी दुश्मनी के बारे में सोचा तो उन्हें वह एक बुरे सपने से लगा। दूसरे दिन जब दोनों की मुलाक़ात रास्ते में हो गई, तब अपने कुकृत्य का परस्पर परिचय दिया। पर अब उनकी मित्रता में कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। बच्चों के डेरे में प्रवेश करने के पहले की सारी घटनाएँ उन्हें अवास्तविक प्रतीत हुईं। उस दिन से वे दोनों ज़िंदगी भर आदर्श मित्र बनकर रहें।

जाली सिक्का

एक व्यापारी किसी पर खीझ रहा था। कोई जाली सिक्का देकर गुड़ खरीद ले गया था। काम की जल्दी में व्यापारी का ध्यान उस ओर नहीं गया।

अचानक व्यापारी चौंक पड़ा। दूकान के सामने कोई भिखारी झुककर किसी चीज को उठाकर जेब में डाल रहा था। वह चीज चमकनेवाला एक रुपये का सिक्का था।

"यह रुपया मेरा है। मुझे वापस दे दो।" व्यापारी ने पूछा।

"आप तो धर्मात्मा हैं। झूठ बोल रहे हैं।" भिखारी ने कहा।

व्यापारी ने उसके साथ सौदा करके उसे मनाया कि वह आधा रुपया देगा तो भिखारी वह रुपया व्यापारी को वापस करेगा। भिखारी ने आधा रुपया ले लिया और दूसरी जेब में से एक रुपया निकालकर व्यापारी के हाथ दे चला गया।

इतने में व्यापारी की पत्नी आ पहुँची और वह किसी चीज को ढूंढ रही थी। क्योंकि उसके लड़के ने एक रुपये का सिक्का कहीं फेंक दिया था।

फिर क्या था, व्यापारी का कलेजा कांप उठा। भिखारी को आधा रुपया देकर उसने उसी का ही रुपया वापस ले लिया था। उसने अपने हाथ का रुपया परखकर देखा। वह भी जाली सिक्का था।

उस दिन सुबह निद्रा से जागते ही व्यापारी ने दो जाली रुपये कमा लिये थे।

तिल

एक गाँव में गजपति और दुर्गा नामक एक दंपति था। बहुत समय बाद उन्हें एक लड़का हुआ। उसके भाल पर इमली के बीज के बराबर का एक तिल था।

पति-पत्नी तिल का ज्ञान रखते थे। गजपति ने उछलकर कहा–"अरी, देखो तो सही। हमारे लड़के के भाग्य में राजयोग है, समझी!" दुर्गा ने बताया कि वह तिल राजयोग का लक्षण नहीं बताता, बल्कि एक महान विद्वान का लक्षण बताता है।

दोनों के बीच मतभेद हुआ। आख़िर वे लड़ने को भी तैयार हो गये। इसी वक्त एक भिखारी द्वार पर पहुँचकर चिल्ला उठा–"माई! थोड़ा खाना दो।"

पति-पत्नी ने भिखारी की ओर देखा। वे आश्चर्य में आ गये। क्योंकि उसके भाल पर भी इमली के बीज के बराबर का तिल झलक रहा था।

समुद्र-मंथन

देव-दानवों का युद्ध दीर्घकाल तक चला। देवताओं ने जान लिया कि वे अमृत का पान कर मृत्यु पर विजय प्राप्त करने पर ही दानवों को पराजित कर सकते हैं। तब अमृत के वास्ते वे मेरु पर्वत के समीप तलाशने लगे।

लेकिन उनकी तलाश व्यर्थ ही गई। अंत में ब्रह्मदेव ने उन्हें बताया कि समुद्र का मंथन करने पर ही उन्हें अमृत मिल सकता है। मगर बिना दानवों की मदद के समुद्र का मंथन संभव न था।

अमृत प्राप्त करने के लिए दानवों ने देवताओं के साथ सहयोग देने की सम्मति दी। तब मथनी के रूप में मंदर पर्वत का उपयोग करने का निर्णय हुआ। मथनी के रस्से के रूप में सहयोग देने के लिए देवताओं ने नागराजा वासुकी से प्रार्थना की, इस पर वासुकी ने मान लिया।
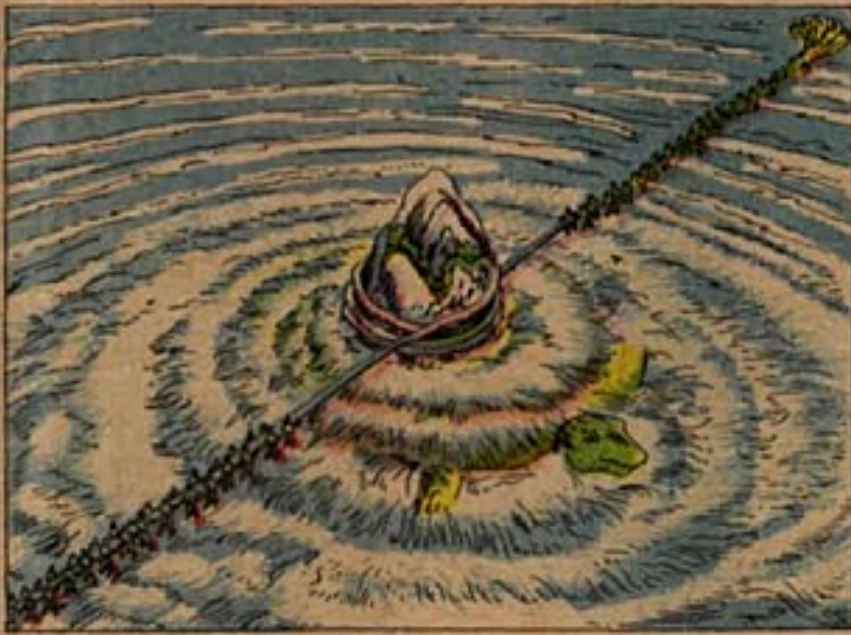
भगवान विष्णु कूर्मावतार लेकर कछुए के रूप में पर्वत को न तिराते तो वह डूब जाता। तब दानवों ने वासुकी का सिर और देवताओं ने उसकी पूंछ पकड़कर एक युग पर्यंत समुद्र का मंथन किया।

शीघ्र ही वासुकी के मुंह से विष ज्वालाएँ फूटीं और चारों ओर फैल गईं, जिससे सारे जगत के विनाश का ख़तरा पैदा हुआ। तब देवताओं ने शिवजी के प्रति प्रार्थना की, इस पर शिवजी ने उस हालाहल को अपने कंठ तक निगल डाला और नीलकंठ नाम से विख्यात हो गये।

इसके बाद समुद्र से कई चीजें उत्पन्न हुईं। उनमें चन्द्रमा, लक्ष्मी देवी, ऐरावत नामक सफ़ेद हाथी आदि। फिर भी देव-दानव समुद्र का मंथन करते ही रह गये।

सब के अंत में अमृतभांड को अपने हाथ में लेकर धन्वंतरी समुद्र के भीतर से पैदा हुए। वे बाद को देवताओं के वैद्य बने। समुद्र-मंथन इस प्रकार सफल हुआ।
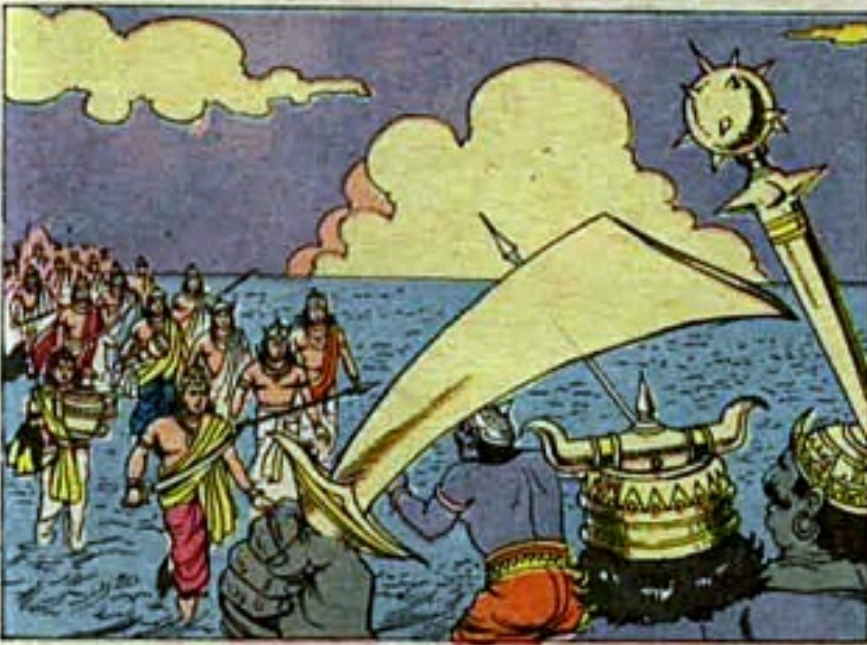
दानव अमृत को देखते ही उसकी ओर लपक उठे। चेतावनी पाकर देवताओं ने दानवों से अमृत को बचाने का यत्न किया। देव-दानव जब अमृत के वास्ते लड़ रहे थे, तब धन्वंतरी असहाय हो देखते ही रह गये।

अचानक वहाँ पर एक अपूर्व सुंदरी प्रत्यक्ष हुई। तब देव-दानवों का संघर्ष बंद हो गया। उन्होंने दोनों दलों के बीच अमृत बांटने का सुझाव दिया। उनके सुंदर रूप पर सम्मोहित हो दानवों ने उस सुझाव को मान लिया।

इस प्रकार मोहिनी के रूप में उत्पन्न व्यक्ति ही विष्णु हैं। वे जानते थे कि दानव अमृत का सेवन कर मृत्यु पर विजय प्राप्त कर ले तो विश्व में अत्याचार, अन्याय बढ़ जायेंगे और सारा विश्व नरक तुल्य बन जाएगा। इसके बाद मोहिनी देवताओं में अमृत बांटने लगीं।

राहू नामक एक दानव ने मोहिनी के व्यवहार पर संदेह किया और देवता के रूप में आकर उसने अपने हिस्से का अमृत ले लिया। पर इस धोखे को समझकर राहू के कंठ तक अमृत पहुँचने के पहले ही विष्णु ने अपने सुदर्शन चक्र का प्रयोग करके राहू का सर काट डाला।

दानवों ने जब इस धोखे को समझ लिया, तब तक सारा खेल ख़तम हो चुका था। उन्हें थोड़ा भी अमृत न बचा था। पर देवता "अमर" हो गये। उन लोगों ने वीरतापूर्वक युद्ध करके दानवों को देवलोक से भगाया।

सिपाहियों की हड़ताल

कोसल राज्य शांति और सुरक्षा के लिए बहुत ही मशहूर था। ऐसे देश में अचानक भारी पैमाने पर चोरियाँ होने लगीं। चोरियों को दबाने के लिए राजा ने सेना का उपयोग करना चाहा, लेकिन उस समय देश के लिए युद्ध का खतरा भी था। इस कारण से मंत्री की सलाह पर राजा ने चोरों का पता लगाने के लिए एक सिपाही दल का निर्माण किया।

सिपाही दल के निर्माण के थोड़े ही दिन बाद चोरियाँ भी घट गईं। दो-तीन साल तक सारे देश में सुख और शांति का बोलबाला रहा। लेकिन उसके बाद फिर चोरियाँ शुरू हो गईं। मगर इस बार सिपाही चोरियों को बंद न कर पाये।

ऐसा क्यों हुआ? इसके समाधान के रूप में जनता में एक अफ़वाह फैल गई। वह यह थी कि सिपाही चोर और डाकुओं से रिश्वत लेकर उन्हें बन्दी नहीं बना रहे हैं। इस अफ़वाह को सच्चा साबित मानकर जनता प्रकट रूप में प्रचार करने लगी।

सिपाही दल के नेता ने अपने ऊपर लगाये गये इस लांछन को अपमानजनक माना और उसने राजा के पास जाकर शिकायत की।

राजा ने उसकी फ़रियाद सुनकर कहा– "मैंने तुम लोगों को इसलिए नियुक्त किया था कि तुम लोग चोरों का पता लगाकर उन्हें बन्दी बनाओ। मगर देश में सर्वत्र चोरियाँ होती ही जा रही हैं। इसलिए इसका मतलब यही होना चाहिए कि या तो जनता की अफ़वाह सच्ची है या तुम लोग नाक़ाबिल हो।"

यह बात सिपाहियों को अपमानजनक प्रतीत हुई। सब ने मिलकर यह निर्णय

माधवी गौतम

किया कि भारी पैमाने पर हड़ताल करनी चाहिए। यह खबर मिलते ही राजा और प्रजा भी भयभीत से हो गये। क्योंकि चोरों को यह पता लग जाय कि सिपाही सब हड़ताल कर रहे हैं, तो उनका हौसला बढ़ सकता है।

सिपाहियों ने राजा के सामने यह शर्त रखी कि वे जनता की जो सेवा कर रहे हैं, उसकी सबके सामने राजा स्वयं प्रशंसा करें तो वे हड़ताल बंद करेंगे। यह शर्त तो सोचने की बात थी, इस कारण राजा ने सिपाहियों से अपने निर्णय के लिए थोड़े दिन की मोहलत माँगी। इस बीच सिपाहियों ने अपने काम पर जाना बंद कर दिया। तब राजा को लगा कि जनता के हित के वास्ते सिपाहियों की शर्त को मान लेना ही उचित होगा।

मगर इस बीच जनता के कुछ प्रतिनिधि राजा से मिले और निवेदन किया–"महाराज! आप सिपाहियों की हड़ताल को लेकर बिलकुल चिंता न करें। सार्वजनिक रूप में उनकी सेवाओं की प्रशंसा करने की कोई जरूरत भी नहीं है!"

राजा ने पूछा–"क्यों? इसका कोई कारण भी तो हो!"

"क्यों कि जब से सिपाहियों ने हड़ताल शुरू की, तब से सारे राज्य में चोरियाँ बिलकुल बंद हो गई हैं।" प्रतिनिधियों ने समझाया।

राजा आश्चर्य में आ गये। इसके बाद उन्होंने दरियाफ़्त किया तो उन्हें पता चला कि देश के सभी चोरों के दिल कभी के बदल गये हैं और सिपाहियों में से ही कुछ लोग चोरी करने में लग गये हैं।

सिपाहियों ने जो हड़ताल शुरू की, उसी ने उनके अपराध को प्रकट किया था। इस पर सिपाहियों के दल का नेता लज्जित हुआ और हड़ताल बंद कर राजा से क्षमा माँग ली।

राजा ने भी उस दिन से सिपाहियों के अधिकार कम किये और उन पर निगरानी का प्रबंध किया।

पहुँच के बाहर

श्यामलाल नामक एक वैद्य ने पड़ोसी गाँव से आकर एक जमीन्दार के घर के बाजू में मकान किराये पर लिया और लोगों का इलाज करने लगा। जल्द ही जमीन्दार और वैद्य के बीच गहरी दोस्ती हुई। जमीन्दार जब भी बीमार पड़ते, वैद्य उनका इलाज किया करता था। एक दिन जमीन्दार ने वैद्य से पूछा–"आजकल बराबर मेरी तबीयत ख़राब होती जा रही है, इसकी वजह क्या है?"

वैद्य ने जमीन्दार को समझाया और दूसरे दिन ही वह अपने पुराने गाँव लौटते हुए बोला–"जमीन्दार साहब! जब भी आप को मेरी ज़रूरत पड़े, ख़बर किया कीजिए!"

इसके बाद कई दिन बीत गये। जमीन्दार के यहाँ से वैद्य के पास कोई बुलावा नहीं आया। एक दिन वैद्य जमीन्दार को देखने गया और पूछा–"आप ने इधर कभी मेरे पास ख़बर नहीं भेजी? आप की तबीयत बिलकुल ठीक है न?"

"ख़बर करने की ज़रूरत नहीं पड़ी।" जमीन्दार ने जवाब दिया।

"जी हाँ! यह बात सही है। किसी के यहाँ कोई चीज़ अगर पहुँच में हो तो ज़रूरत भी बढ़ जाती है।" वैद्य ने जवाब दिया।
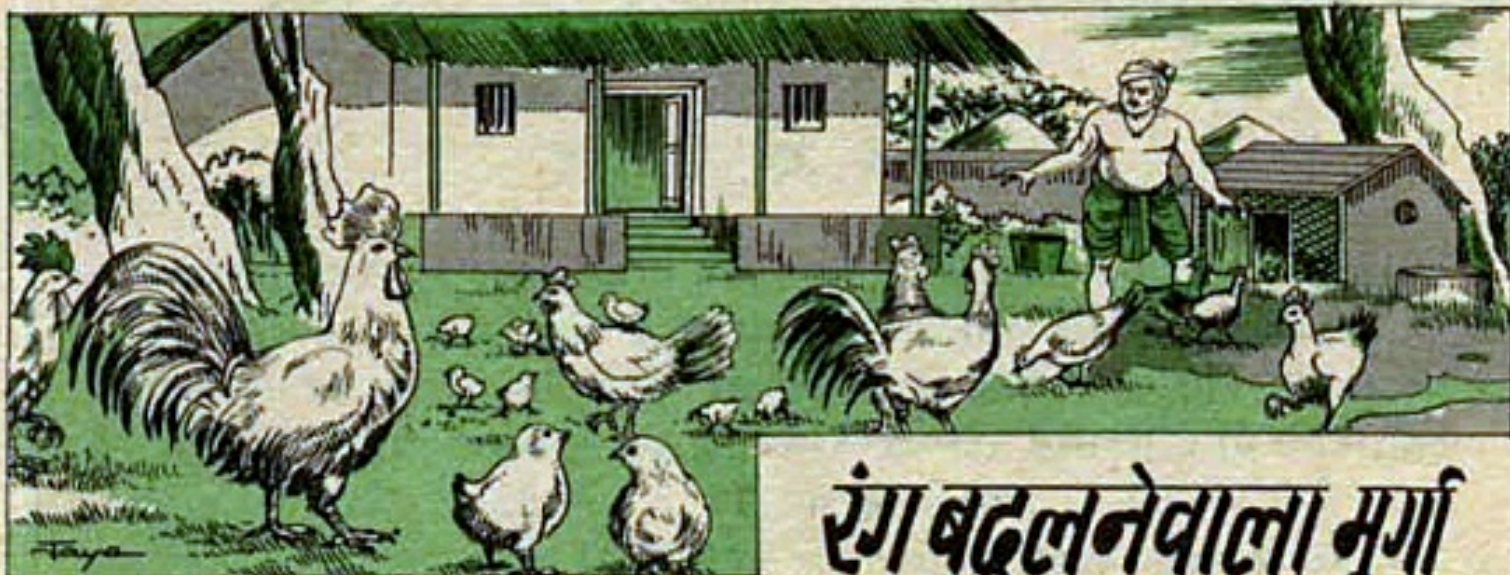
रंग बदलनेवाला मुर्गा

एक गाँव में एक बुढ़िया रहा करती थी। उसके पास एक सफ़ेद मुर्गा था। बुढ़िया उस मुर्गे को अपने प्राणों से अधिक मानती थी। उस गली के सभी लोग उस मुर्गे की खूबसूरत पर खुश हो दिल खोलकर देखा करते थे।

एक दिन संध्या के समय तक वह मुर्गा बुढ़िया के घर न लौटा। बूढ़ी ने कई लोगों के घर जाकर मुर्गे का पता पूछा, मगर कोई भी उसका पता बता न पाये। बेचारी बूढ़ी ने इसी चिंता में रात को खाना तक न खाया।

वास्तव में बात यों हुई, बुढ़िया का मुर्गा तीन-चार गलियाँ पार करके वहाँ के मुर्गों में मिल गया और दाना चुगते वहीं रह गया। उन मुर्गों के मालिक सुंदरदास ने अपने मुर्गों को पुकारते वक़्त बूढ़ी के सफ़ेद मुर्गे को देखा। उस सुंदर और चमकनेवाले मुर्गे को देखते ही उसे हड़पने का लोभ उसके मन में पैदा हुआ। इस पर उसने उस सफ़ेद मुर्गे को पकड़ा और उस पर पीला रंग पोतकर अपने घर बांध दिया।

रात भर वह मुर्गा सुंदरदास के घर रहा, सवेरे जब उसके लड़के ने अन्य मुर्गों के साथ उसे भी झाबे में से बाहर निकाला तो वह बचकर भाग निकला। यह खबर मालूम होते ही सुंदरदास उसकी तलाश में चल पड़ा।

इस बीच बुढ़िया का मुर्गा लाख के खिलौने बनानेवाले गोपाल के पिछवाड़े में चला गया। गोपाल ने उस मुर्गे को देखते ही सोचा कि उसे ले जाकर हाट में बेच देने पर अच्छी क़ीमत मिल जाएगी, उसे पकड़ लिया और उसके असली मालिक के पहचानने से बचाने के हेतु उस पर सफ़ेद रंग लगाया, तब अपने आँगन में एक

खूंटे से बांध दिया। उसके सामने चुगने के लिए थोड़े से दाने डाल दिये और आप खिलौने बनाने में लग गया।

सवेरा होते ही बूढ़ी औरत अपनी गली के चार-पांच लोगों को साथ ले सारे घर ढूंढ़ते गोपाल की गली में पहुंची। उसके आंगन में बंधे मुर्गे को देखा। बूढ़ी के साथ आये गांव के लोगों ने पहचान लिया कि वह सफ़ेद मुर्गा उस बुढ़िया का ही है। इस पर गोपाल और बूढ़ी के साथ आये हुए लोगों के बीच वाद-विवाद चला।

उस वक़्त उधर से निकलनेवाले मुखिये ने उस वाद-विवाद को देख बूढ़ी से पूछा– "बूढ़ी माई, आखिर बात क्या है?" बूढ़ी ने बताया कि उसके सफ़ेद मुर्गे को गोपाल उठा लाया है और अपनी गली के लोगों की गवाही भी दिलाई। इस पर गोपाल ने कहा–"मुखिया साहब! वास्तव में यह सफ़ेद मुर्गा नहीं है, पीला मुर्गा है। मैंने शौक से इस पर सफ़ेद रंग लगाया है।"

वहां पर इकट्ठी भीड़ में मुर्गे की तलाश में आया हुआ सुंदरदास भी था। उसने पीले रंग का मुर्गा यह नाम सुनते ही झट कहा–" मुखिया साहब! यह पीला मुर्गा मेरा है। मैं आज सुबह से इसकी खोज कर रहा हूं। कृपया मुझे वापस दिलाइये।" इस पर मुखिये ने गोपाल से

कहा–"तुमने दूसरों का मुर्गा चुराकर उसका असली रंग बदल डाला है। इस अपराध में मैं तुम्हें पच्चीस रुपयों का जुर्माना लगाता हूं।"

तब सुंदरदास मुर्गा को उठाकर ले जाने को हुआ, मगर बूढ़ी ने उसका हाथ थामकर सुंदरदास को वहां से हिलने नहीं दिया। उसने मुखिये को साफ़ बताया कि वह मुर्गा ठीक अपने सफ़ेद मुर्गा जैसा ही है। सुंदरदास ने जहां-तहां उसके रंग को कपड़े से पोंछ डाला, तब सफ़ेद रंग की जगह पीला रंग निकल आया।

"देखते हैं न साहब, यह मेरा पीला मुर्गा है।" सुंदरदास ने सफ़ाई दी।

इस पर भी बुढ़िया की शंका का निवारण नहीं हुआ। तब मुखिये ने एक लोटे से पानी मंगवाया और मुर्गे को साफ़ धुलवा दिया। इस पर पहले सफ़ेद रंग का पानी निकल आया। तब पीले रंग का। अंत में मुर्गे का असली रंग प्रकट हो गया।

"सुंदरदास! यह क्या? तुमने अपना मुर्गा पीला बताया, पर साफ़ करने पर यह सफ़ेद मुर्गा निकला।" मुखिये ने मजाक़ उड़ाया।

"जी, मेरी ही भूल थी। मैंने सोचा था कि यह मेरे पीले रंग का मुर्गा है।" सुंदरदास ने कहा और वहाँ से खिसकने को हुआ।

"मुखिया साहब! ये तो झूठ बोलते हैं। जब मैंने देखा, तब इसका रंग पीला था।" गोपाल ने कहा।

सुंदरदास ने सोचा कि अब झूठ बोलना उचित नहीं है, उसने मुखिये के पैरों पर गिरकर माफी माँग ली। मगर मुखिये ने उसे क्षमा नहीं किया। दूसरों के मुर्गे को पकड़कर रंग बदलने के अपराध में गोपाल के साथ सुंदरदास को भी पच्चीस रुपये जुर्माना लगाकर बुढ़िया को देने को कहा।

दोनों ने बूढ़ी के हाथ पकड़कर क्षमा करने की प्रार्थना की।

बूढ़ी ने रहम खाकर कहा-"मुखिया साहब! आप कृपया इन दोनों को छोड़ दीजिए! अगर इन दोनों ने मेरे मुर्गे को मारकर खा डाला होता तो मैं क्या कर सकती थी? मेरा मुर्गा तो मुझे वापस मिल गया है।"

"सुनो भाई, उस बुढ़िये के भले मानस को देखकर ही सही तुम दोनों अपनी कुबुद्धि को बदल डालो।" यों समझाकर मुखिया वहाँ से चले गये।

इसके बाद बुढ़िया खुशी खुशी अपने सफ़ेद मुर्गे को घर ले गई और उसकी दीठ उतारी।

मंगल मंगल ही है

देव प्रयाग में मंगल सिद्धांती ज्योतिष शास्त्र के लिए बहुत ही विख्यात था।

एक बार अचानक मंगल को अपना नाम बहुत ही वाहियात मालूम हुआ। ज्योतिष शास्त्र के उद्दण्ड पंडित के लिए मंगल विकृत नाम कैसा? उसके माता-पिता ने उसका नामकरण अच्छा नहीं किया। मन ही मन उन्हें गालियाँ दीं। आखिर वह रात भर सोचता रहा, तब उसने निश्चय कर लिया कि शंकर तो महादेव है। इसलिए अपना नाम शंकर रखने का निश्चय कर लिया।

दूसरे दिन ज्योतिषी के पास जो लोग अपनी जन्म कुंडली दिखाने आये, उन लोगों ने "मंगल सिद्धांती!" संबोधित किया, तब उसने उन्हें समझाया-"आज से मेरा नाम शंकर है। शंकर सिद्धांती नाम से मुझे पुकारिये।" मगर देवप्रयाग के सभी लोगों ने उसे "मंगल सिद्धांतीजी!" ही संबोधित किया, उल्टे समझाने लगे- "पंडितजी! बचपन से ही आप को हम मंगल नाम से ही जानते हैं। इसलिए हम किसी दूसरे नाम से नहीं पुकार सकते। अलावा इसके माँ-बाप ने जो नाम रखा, उसे बदलना अच्छा नहीं है।"

इस पर मंगल को अपने गाँव पर बड़ा गुस्सा आया, वह उस गाँव को छोड़कर चला गया। किसी दूसरे गाँव में जाकर शंकर सिद्धांती के रूप में मशहूर हो गया।

एक दिन सिद्धांती की पत्नी ने लकड़हारे से सौदा करते हुए पूछा-"क्यों भाई, ये लकड़ियाँ अच्छी तरह से जलती हैं न?"

इस पर लकड़हारे ने जवाब दिया- "माई, शंकर की लकड़ियों का न जलना कैसा? शिवजी के तीसरे नेत्र के खुलने के समान धक् धक् करके ये लकड़ियाँ न

मणिकांत पांडे

जलीं तो मेरा नाम शंकर नहीं।" ये बातें सुनने पर शंकर का मुँह स्याह पड़ गया। उसने मन में सोचा-"ओह! कैसी भूल हो गई है। शंकर एक लकड़हारे का भी नाम है। ऐसा नाम उसके द्वारा चुन लेना कैसी बेवकूफ़ी थी।"

यों सोच-विचाकर उसने विष्णु का स्मरण करके अपना नाम 'लक्ष्मीपति' के रूप में बदलने का निश्चय कर लिया। दूसरे दिन से उसके घर आनेवालों को समझाने लगा कि आइंदा उसे शंकर के बदले लक्ष्मीपति कहकर पुकारा करे।

लेकिन उस गाँव के अधिकांश लोग शैव थे। इसलिए उन लोगों ने साफ़ बता दिया कि वे उसे शंकर सिद्धांती कहकर ही पुकारेंगे, लक्ष्मीपति कहकर कभी नहीं, इस पर सिद्धांती का क्रोध भड़क उठा। तब वह उस गाँव को छोड़ दूसरे गाँव में पहुँचा। वहाँ पर लक्ष्मीपति के नाम से स्थिर हो गया।

एक दिन सिद्धांती गाँव के चौपाल में बैठकर ज्योतिष संबंधी कोई कागज़ देख रहे थे, तब एक भिखारी अपनी खुद की कविता-"सुनो हे गुरु, लक्ष्मीपति की कविता!" कहते अपने नाम पर कीर्तन गाते आ पहुँचा।

इस पर लक्ष्मीपति सिद्धांती चौंक उठा और उसने उस भिखारी का नाम पूछा। उसने अपना नाम गाकर सुनाते हुए लक्ष्मीपति बताया। लक्ष्मीपति भिखारी को भेजकर गहरी सोच में पड़ गया। एक भिखारी का और उसका भी एक ही नाम होना कैसे अपमान की बात है? उसने सोच-समझकर अपना नाम 'चिरंजीवी' बदलने का इरादा किया।

दूसरे दिन अपने पास आये हुए लोगों से ज्योतिषी ने बताया कि अब उसका नाम चिरंजीवी के रूप में बदल गया है, इसलिए आइंदा सब कोई उसे चिरंजीवी सिद्धांती ही पुकारा करे। पर उस गाँव के अधिकांश लोग वैष्णव थे, इस कारण

सब ने स्पष्ट बता दिया कि वे लोग उसे भविष्य में भी लक्ष्मीपति ही कहकर पुकारेंगे, अन्य नाम वे अपने मुंह से उच्छारित नहीं करेंगे।

सिद्धांती उस गाँव के लोगों से नाराज़ हो दूसरे गाँव में चला गया और वहाँ पर चिरंजीवी नाम से मशहूर हो गया।

एक दिन प्रातःकाल आंगन में पानी छिड़ककर रंगोली सजानेवाली नौकरानी नहीं आई। सिद्धांती का यह नियम था कि बिना रंगोलीवाली ड्योढ़ी पार नहीं करनी है। इसलिए वह नौकरानी पर खीझ रहा था, तभी नौकरानी आ पहुँची। देरी हो जाने की कैफियत देते हुए बोली– "सिद्धांतीजी, आज मेरे घर के सामने तीन साल का चिरंजीवी नामक एक मुन्ना मर गया है। उस मकान के मालिक के वही एक मात्र संतान था। उनके दुख को देखते मेरे पैरों ने जवाब दे दिया था!"

ये बातें सुनने पर सिद्धांती का सर चकरा गया। प्यार से चिरंजीवी नाम रख लिया तो तीन साल की उम्र में ही उसे मृत्यु ने दबोच डाला है। छी! कैसा बुरा नाम है! मैंने भूल से यह नाम चुन लिया है।" यों विचार कर वह अपने निजी गाँव की ओर चल पड़ा।

उस समय देव प्रयाग के लोग यह सोचकर पछता रहे थे कि "उफ़! हम लोग मंगल को शंकर सिद्धांती कहकर पुकार न पाये, हम लोगों ने नाहक़ ही एक बड़े ज्योतिषी को खो दिया है।"

सिद्धांती को फिर से अपने गाँव में पाकर वे लोग बहुत खुश हुए और प्यार से पुकारने लगे–"अहो, शंकर सिद्धांतीजी! कुशल हैं न? कब पधारे! कितने दिन बाद आप के दर्शन हुए!"

इस पर सिद्धांती ने बिना संकोच के विनयपूर्वक बताया–"मेरा नाम शंकर-गिंकर कुछ नहीं। माँ-बाप ने प्यार से मंगल नामक जो नाम रखा, उसी नाम से मुझे आइंदा पुकारा कीजिए। मुझे वही नाम अब सबसे अच्छा लगता है।"

भूत का पिंड छूट गया

वाणी और वर्मा के कोई संतान न थी। पर वे इतने भले थे कि सारे गाँव के लोग उनके भलेपन की सदा चर्चा किया करते थे।

एक दिन रात को मूसलधार वर्षा हो रही थी। वर्मा और वाणी खाने के लिए बैठने ही वाले थे कि बाहर से किसी ने जोर से दर्वाजे पर दस्तक दी। किवाड़ खोलकर देखा तो वर्षा में भीगनेवाले युवा दंपति उन्हें दिखाई दिया।

"शहर में जाते हम वर्षा में फंस गये। क्या आज की रात आप के घर में आश्रय मिल सकता है?" उस दंपति ने पूछा।

"अन्दर आ जाइये।" इन शब्दों के साथ वाणी ने उनका स्वागत किया, खाना खिलाकर उनके सोने का प्रबंध किया।

उनके भोजन करने के बाद थोड़ा ही खाना बचा था। वाणी ने उसे अपने पति को खाने को बताया। क्योंकि फिर से खाना बनाने के लिए लकड़ियाँ न थीं, भीग गई थीं।

वर्मा ने हठ किया—"हम दोनों आधा-आधा लेंगे।" इसके बाद दोनों ने बात करते थोड़ा-थोड़ा खाना खा लिया और सो गये।

सवेरे किसी के रोने की आवाज़ सुनकर वे चौंककर उठ बैठे। घर के किवाड़ खुले थे। ड्योढ़ी पर रात को आई हुई औरत फूट-फूटकर रो रही थी। इस पर वाणी और वर्मा अचरज में आ गये और उसके रोने का कारण पूछा।

"मैं क्या बताऊँ? मेरी गृहस्थी डूब गई। रात को मैं इस घर में न आती तो अच्छा होता। रात को मेरे पति आप दोनों का सरल प्रेम देख बोले—"क्या तुमने कभी इस गृहिणी जैसे मेरे साथ प्यार

रामनिवास शर्मा

किया है? जो पत्नी अपने पति के साथ प्यार नहीं कर सकती, वह पत्नी ही क्यों?" इसके बाद मेरे बहुतेरे समझाने पर भी कान तक दिये बिना चले गये। वे बड़े ही हठी हैं, फिर लौटकर आनेवाले नहीं हैं।" सिसकियाँ लेते बोलीं।

उस औरत का नाम चन्द्रमती है।

वर्मा ने बड़ी उद्विग्नता के साथ चन्द्रमती के पति की खोज की। पर कहीं उसका पता न चला।

"मैं जानती हूँ, वे लौटकर नहीं आयेंगे! मेरे अपने तो कोई नहीं है। किसी कुएँ में कूदकर जान दे दूँगी।" यों कहते चन्द्रमती फिर रो पड़ी।

उसकी हालत पर उस दंपति का दिल पिघल उठा। मर्द की अच्छाई पर ही औरत का सुख आधारित है। उन लोगों ने समझाया—"तुम बिलकुल चिंता न करो। तुम्हारे पति के लौटने तक तुम हमारे ही घर रहो।"

उस दिन से चन्द्रमती उस परिवार की एक सदस्या के रूप में रहने लगी। वह देखने में नरम स्वभाव की सी लगी। रात को वही खुद रसोई बनाती थी।

एक महीना बीत गया। वर्मा का बचपन का दोस्त मुरारी चार-पाँच दिन वर्मा के घर बिताने के ख़्याल से आया। वह दो-चार महीनों में एक बार अवश्य आया करता था। पिछली बार जब आया था, उस वक़्त चन्द्रमती न थी। उसने वर्मा के द्वारा चन्द्रमती की सारी कहानी जान ली। उस दिन रात को चन्द्रमती ने ही सब को खाना परोसा। भोजन के बाद मुरारी दालन में खाट लगाकर लेट गया।

मगर बड़ी देर तक मुरारी को नींद नहीं आई। आधी रात के वक़्त कोई आहट पाकर उसकी आँख खुल गई। चन्द्रमती हाथ में दिया लेकर धीरे से रसोई घर के किवाड़ खोल रही थी। रसोई घर के उस पार की खिड़की पर

किसी के द्वारा दस्तक देने की आवाज़ सुनाई दी।

मुरारी को चन्द्रमती का व्यवहार और खिड़की की आहट पाकर संदेह हुआ। चन्द्रमती के रसोई घर में पहुँचते ही मुरारी झट से उठ बैठा। छोटी खिड़की में से रसोई घर के अन्दर झांका। चन्द्रमती एक पात्र में चावल, दाल, सब्जी और दही रखकर खिड़की में से भीतर पहुँचे हाथों में थमा रही है।

खिड़की के उस पार का व्यक्ति कह रहा था–"और कितने दिन यों आधी रात के भोजन करना होगा? किसी उपाय से तिजोरी का धन हड़पकर जल्दी आ जाओ।" वह व्यक्ति अंधेरे में था, इसलिए मुरारी को दिखाई नहीं दिया।

"इन लोगों का विश्वास अभी अभी मुझ पर जम रहा है। जल्दी ही चाभियों का गुच्छा मेरे हाथ में आ जाएगा। तुम थोड़ा सब्र करो।" चन्द्रमती ने कहा।

"अरी चोर की बच्ची! बाहर से भोली बनकर मेरे दोस्त की उदारता को आसरा बनाकर अपने मर्द के साथ मिल कर यह नाटक रच रही हो! हाँ देखती रह जाओ, मैं तुम्हारा नाटक बंद करवा देता हूँ।" यों मुरारी ने अपने मन में सोचा। तब जाकर वह लेट गया। फिर उसने निश्चय किया कि चन्द्रमती का यह समाचार वाणी-वर्मा को सुनाकर उनके मन को दुखाये बिना उनके घर से लगे भूत का पिंड़ छुड़ा देना है।

दूसरे दिन सवेरे मुरारी ऊँची आवाज़ में वर्मा से कहने लगा–"बाप रे बाप! रात को मैं पल भर भी सो नहीं पाया। लगता है कि इस घर में कोई भूत घुस आया है। मैंने पूरब की ओर जो खाट लगाई थी, उसे पश्चिम की ओर खींच ले गया है। खिड़की में पीने के जल का जो बर्तन रखा था, वह खाट के नीचे पहुँच गया है। मैं तो हिम्मतवर हूँ, दूसरा होता तो उसका कलेजा फटकर मर जाता।"

वाणी और वर्मा ये बातें सुन घबरा गये और बोले–"तब क्या ओझा को बुलवा ले?"

"आप घबराइये नहीं। मैं सब प्रकार के भूतों को भगा सकता हूँ।" मुरारी ने उन्हें हिम्मत बंधवाई।

दूसरे दिन वह बाजार से पायल खरीद लाया और रात को जब-तब आवाज़ करने लगा। इसके बाद उसने तकिये को चारपाई पर सीध में लगाया, उस पर दुपट्टा ओढ़कर पिछवाड़े में गया, रसोई घर की खिड़की पर दस्तक दी।

बड़ी देर बाद हिम्मत कर चन्द्रमती आई, पात्र में सारी चीज़ें लगाकर उसने मुरारी के हाथों में वह पात्र थमा दिया। मुरारी झट से घर के अंदर आया। उस पात्र को चन्द्रमती की चारपाई पर रखकर मुरारी ने चारपाई को दूसरी ओर खींचा, तब चुपचाप आकर अपनी खाट पर लेट गया।

चन्द्रमती थोड़ी देर तक पात्र की प्रतीक्षा में खड़ी रही, खिड़की के समीप बाहर अपने पति का पता न पाकर रसोई घर के किवाड़ बंद किये, अपने कमरे में पहुँचकर चीख उठी। उस चिल्लाहट को सुनकर वर्मा और वाणी चौंककर जाग पड़े। चन्द्रमती की खाट के पास दौड़े आये। वहाँ पर मुरारी भी इस तरह आ पहुँचा, मानो उसी वक़्त जाग उठा हो।

चन्द्रमती सहमी हुई आवाज़ में बोली–"भूत की बात सच है। मुझे भी पायलों की आवाज़ सुनाई दी है। उस ओर की खाट इस ओर आ लगी है। इसलिए घबड़ाकर उठ बैठी हूँ। देखिये, रसोई घर में रहनेवाला यह पात्र मेरी खाट पर आ गया है।"

मुरारी ने ढाढ़स बंधाकर कहा–"आप लोग डरियेगा नहीं, मैं भूत की खबर लूँगा।" इसके बाद वह दो दिन तक रातों में पायलों की आवाज़ करता ही रहा। इसीलिए अपने पति के द्वारा रसोई

घर की खिड़की पर दस्तक देने पर भी चन्द्रमती अपने कमरे से बाहर आने को डर गई।

तीसरे दिन रात को मुरारी बाहर ताक में बैठा रहा। चन्द्रमती के पति को पिछवाड़े के रास्ते में जाते देख वह भी उसी रास्ते जानेवाले जैसा अभिनय करते गुनगुनाने लगा–"क्या वह मेरी बहन के प्रति ऐसा द्रोह करेगा? मैं भी देख लूंगा।"

चन्द्रमती का पति बाहर खड़ा रहा। उसने शंका भरी आवाज में पूछा–"अजी, बात क्या है? क्या हुआ है?"

"और क्या होना है जी! इस घर के मालिक मेरे बहनोई साहब हैं, मेरी बहन के कोई संतान नहीं है। इस घर में कोई ऐसी औरत आकर जम गई है जिसे उसके पति ने त्याग दिया है। अब मेरे बहनोई कहते हैं कि वे उस औरत के साथ शादी करेंगे। वह औरत भी इसके लिए तैयार मालूम होती है।" यों कहते तेजी के साथ चला गया, फिर दूसरे रास्ते से आकर अपनी खाट पर सो गया। मुरारी की कही बात पर चन्द्रमती के पति का विश्वास जम गया। क्योंकि वह उधर तीन दिन से खिड़की के पास खाना देने नहीं आई थी।

फिर क्या था, दूसरे दिन सवेरे चन्द्रमती के पति ने प्रवेश करके वर्मा से कहा–"मैं मूर्खतावश अपनी पत्नी को यहां पर छोड़ गया था। अब कृपया उसे मेरे साथ भिजवा दीजिए।"

भूत के भय से कांपनेवाली चन्द्रमती अपने पति के साथ खुशी-खुशी चली गई। उसके जाने पर वाणी और वर्मा यह सोचकर दुखी हो रहे थे कि चन्द्रमती के चले जाने पर उनका घर एक दम सून-सा लगता है, तब मुरारी ने कहा–"तुम लोगों को यह सोचकर खुश होना चाहिए कि तुम्हें भूत का पिंड छूट गया है। उल्टे दुखी हो रहे हो?" इसके बाद मुरारी ने उन्हें सारी सच्ची कहानी सुनाई और उनसे विदा लेकर चला गया।

देवदूत ने इंद्र के पास लौटकर चन्द्र की बातें बताई। इन्द्र क्रोध में आये और बोले-"ऐसा अनुचित कार्य करने के बाद भी चन्द्र ऐसी हिम्मत रखते हैं?" इसके बाद वे चन्द्र पर युद्ध के लिए तैयार हो गये। यह बात मालूम होने पर शुक्राचार्य अपने शिष्यों को साथ ले चन्द्र की मदद के लिए आ पहुँचे। शिवजी बृहस्पति की सहायता के लिए आये। तब दोनों दलों के बीच भयंकर युद्ध हुआ।

उस समय ब्रह्मदेव ने प्रवेश करके चन्द्र से कहा-"तुम बृहस्पति की पत्नी को मुक्त करो। वरना भगवान विष्णु को यह समाचार देकर तुम्हारा घमण्ड तुड़वा दूंगा।" फिर वे शुक्राचार्य से बोले-"तुम बृहस्पति से ईर्ष्या करते हो, इसलिए चन्द्र की मदद करने आये। तुम इस तरह अन्याय का समर्थन करोगे तो कोई भी नारी अपने पति के साथ गृहस्थी चलाएगी?"

इस पर शुक्राचार्य ने चन्द्र को सलाह दी कि वह तारा को मुक्त कर दे। तब गर्भवती तारा को चन्द्र ने बृहस्पति के हाथ सौंप दिया। शिवजी वगैरह वहाँ से चले गये। तारा ने बृहस्पति के घर एक पुत्र का जन्म दिया। बृहस्पति उस शिशु का जातकर्म करने जा रहे थे, तब चन्द्र की तरफ़ से दूत ने प्रवेश करके उनका संदेशा सुनाया-"यह शिशु मेरा पुत्र है, तुम्हारा नहीं। ऐसी हालत में मेरे पुत्र का तुम जातकर्म कैसा कर सकते हो?"

३. शुक मुनि का जन्म

इस पर बृहस्पति ने चन्द्र के दूत को समझाया–"इस शिशु की आकृति मेरी है, यह मेरा ही पुत्र है। चन्द्र की रूप-रेखाएँ इसमें बिल्कुल नहीं हैं।" इस पर दूत ने चन्द्र के पास लौटकर यह वृत्तांत सुनाया।

चन्द्रमा क्रोध में आ गये और राक्षस गणों को साथ ले पुनः युद्ध करने आ पहुँचे। देव-दानवों का युद्ध फिर से शुरू हो गया।

इस बार भी ब्रह्मदेव आ पहुँचे। उन्होंने युद्ध को रोकने की सलाह दी और युद्ध का कारण बनी तारा को समझाया–"सुनो, तुम्हारे कारण कैसी विपत्ति आ पड़ी है? यह बताओ कि तुमने किसके द्वारा इस पुत्र का जन्म दिया है? चन्द्रमा के द्वारा या बृहस्पति के द्वारा?"

तारा ब्रह्मा की आँखों में देख नहीं पाई। उसने लज्जा के मारे सर झुकाकर कहा–"चन्द्रमा के द्वारा ही! चन्द्रमा के द्वारा ही मैंने इस पुत्र का जन्म दिया है।"

ब्रह्मदेव ने उसी वक़्त उस शिशु को चन्द्रमा को दिलाया और इस प्रकार उनका झगड़ा समाप्त हुआ। इस तरह चन्द्रमा और बृहस्पति की पत्नी तारा के बुध नामक शिशु उत्पन्न हुआ। उस बुध के पुरुरव पैदा हुए। पुरूरव का जन्म यों हुआ है:

पुरूरव की कहानी

पुराने जमाने में सुद्युम्न नामक एक महान राजा रहा करते थे। एक बार वे अपने कुछ मंत्रियों को साथ लेकर शिकार खेलने घोड़े पर चल पड़े। जंगल के बीच अत्यंत सुंदर कुमार वन को देख उसमें प्रवेश किया। दूसरे ही क्षण सुद्युम्न और उनके अनुचरों ने नारियों के रूप को धारण किया। आखिर सुद्युम्न का घोड़ा भी घोड़ी बन गया। सुद्युम्न की समझ में न आया कि ऐसा क्यों हो गया है? वे यह सोचकर चिंता में पड़ गये–"मैं इस रूप को लेकर राज्य कैसे कर सकूँगा? अपनी

पत्नियों के साथ कैसे गृहस्थी चला पाऊँगा? शत्रु के साथ कैसे लड़ूंगा?"

यह वृत्तांत सुनानेवाले सूत मुनि से शौनक आदि मुनियों ने पूछा—"मुनिवर, राजा तथा उनके परिवार का नारियों के रूप में बदल जाने का क्या कारण है?"

इसके उत्तर में सूत मुनि ने यों सुनाया:

एक बार सनक, सनंद आदि मुनि शिवजी के दर्शन करने कुमारवन में पहुँचे। उस समय उन्हें शिवजी के साथ पार्वती भी नग्न दिखाई दीं। उस क्षण सभी मुनि वापस मुड़े और नारायणवन को चले गये। लेकिन इस घटना पर पार्वती बहुत ही लज्जित हो उठीं। उनकी व्यथा को देख शिवजी ने यह नियम रखा कि उस वन में जो भी पुरुष प्रवेश करता है, वह नारी बन जाएगा। सुद्युम्न तथा उसके परिवार का नारियाँ बन जाने का यही कारण है।

इसके बाद सुद्युम्न अपना नाम 'इळा' बदलकर अपनी सखियों के साथ उसी वन में रहने लगे। इस बीच चन्द्रमा के पुत्र बुध ने इळा को देखा। उसी क्षण दोनों ने परस्पर प्यार किया। उनका जो पुत्र हुआ, वही पुरूरव है।

इसके बाद इळा ने अपने कुल गुरु वशिष्ठ का स्मरण किया। वशिष्ठ ने नारी रूप में स्थित सुद्युम्न की मानसिक व्यथा को भांपकर शिवजी के प्रति तपस्या की। शिवजी ने वशिष्ठ पर अनुग्रह करके उन्हें दर्शन दिये।

वशिष्ठ ने शिवजी से प्रार्थना की–"भगवान, हमारे राजा सुद्युम्न को फिर से पुरुष बन जाने का वरदान दीजिए।"

शिवजी ने कहा–"वशिष्ठ! मेरा वचन कभी व्यर्थ नहीं होता। इसलिए मैं यही वर दे सकता हूँ कि सुद्युम्न एक महीना पुरुष के रूप में रहेगा और दूसरा महीना नारी के रूप में।"

इस प्रकार वशिष्ठ की कृपा से पुन: पुरुष बने सुद्युम्न अपनी राजधानी को लौट आये और पूर्ववत शासन करने लगे। वे पुरुष के रूप में रहनेवाले महीने में राज्य का शासन करते और नारी के रूप में रहते समय अंत:पुर से बाहर निकलते न थे। जनता को यह बात बिलकुल अच्छी नहीं लगती थी।

सुद्युम्न ने अपने पुत्र के बड़े होने तक इसी प्रकार राज्य किया, तब तपस्या करने के लिए वन में पहुँचे। वहाँ पर नारद मुनि के द्वारा नवाक्षरी मंत्र का उपदेश पाकर तपस्या कर रहे थे। एक दिन सौभाग्य से महादेवी सिंह पर आरूढ़ हो उनके सामने प्रत्यक्ष हुईं। सुद्युम्न ने परमानंदित हो उस देवी का स्तोत्र किया और उनके अनुग्रह से मुक्ति प्राप्त की।

सुद्युम्न के बाद पुरूरव ने बहुत समय तक राज्य किया। उन्होंने कई यज्ञ किये और ब्राह्मणों में दान किये। उसके रूप और यश पर मुग्ध हो ऊर्वशी ने उनके साथ प्रणय किया। इसके बाद ब्रह्मदेव के शाप के कारण ऊर्वशी को भूलोक में आना पड़ा। उस वक़्त ऊर्वशी ने पुरूरव से मिलकर उनके साथ गृहस्थी चलाने को मान लिया। पर उसने दो शर्तें रखीं–"मेरे पास दो भेड़ें हैं। वे मेरी संतान से भी प्यारी हैं। तुम्हें उनकी रक्षा करनी होगी। साथ ही तुम्हें मुझे कभी नग्न दिखाई नहीं देना चाहिए। दूसरी बात यह है कि मुझे अकसर तुम्हें घी देना होगा। इन शर्तों को जब तुम तोड़ोगे तब मैं तुम्हें छोड़कर चली जाऊँगी।"

इन शर्तों को मानकर पुरूरव ने ऊर्वशी को स्वीकार किया और उसके साथ कई वर्ष तक गृहस्थी चलाई। वह पूर्ण रूप से वासना का शिकार हो धर्म, अर्थ और मोक्ष की बात भूल गये। ऊर्वशी भी पुरूरव के प्रेम में तन्मय हो स्वर्ग और इन्द्र को भी भूल बैठी।

ऊर्वशी और पुरूरव को इस प्रकार प्रेमपाश में बंधे देख इन्द्र ने ऊर्वशी को फिर से देवलोक में बुलवाना चाहा। तब गंधर्वों को आदेश दिया—"स्वर्ग में रंभा आदि अनेक अप्सराएँ हैं, फिर भी ऊर्वशी के अभाव में वह फीका मालूम होता है। इसलिए तुम लोग किसी प्रकार से पुरूरव को धोखा देकर भेड़ों का अपहरण करो तो काम बन जाएगा।" इंद्र का आदेश पाकर गंधर्वों ने पुरूरव को चकमा देकर एक अंधेरी रात में भेड़ों का अपहरण किया। वे चिल्लाने लगीं। इस पर ऊर्वशी ने पुरूरव से कहा—"मैं अपने पुत्रों से भी अधिक माननेवाली भेड़ों की चोरी होते देखकर भी तुम चुप रह गये। मैंने यह सोचकर असावधानी की कि तुम उनकी रक्षा करोगे। मुझे न मालूम था कि तुम ऐसे असमर्थ हो। मैं धोखा खा गई।" इस प्रकार ऊर्वशी पुरूरव को खूब ताने देने लगी।

अपनी प्रेयसी पर रहम खाकर पुरूरव नंगे बदन चोरों का पीछा करने लगा। उस वक्त गंधर्वों ने इस तरह बिजली

उस समय पुरूरव ने ऊर्वशी के समीप जाकर गद्गद् कंठ से कहा–"ऊर्वशी! मैं कभी तुम पर भूल से भी नाराज न हुआ था। तुम्हारी हानि भी कभी नहीं की। मैं तुम्हारा दास बनकर रहा। तुमने जो कुछ कहा, उसका पालन किया, फिर भी तुम मुझे छोड़कर चली गई। यह क्या तुम्हारे लिए उचित है? तुम मुझसे प्यार करके मेरे पास आई थीं। ऐसी तुम मुझे छोड़कर क्यों चली गईं? मैंने तुम्हारे प्रेम को शाश्वत मान रखा था। क्या तुम मुझे इस तरह दुख सागर में डुबो दोगी?"

पुरूरव का मन तोड़ने के ख्याल से ऊर्वशी बोली–"हमारी जाति में प्रेम नामक कोई चीज नहीं होती। तुम मेरी चिंता न करो। अपने राज्य में लौटकर शासन करो।" यों समझाकर ऊर्वशी चली गई।

व्यास ने घृताची को देखने पर सोचा कि पुरूरव का जो हाल हुआ, वही उसके साथ भी शायद हो जाय! घृताची भी यह सोचकर डर के मारे मादा तोता बन गई कि कहीं व्यास उसे शाप न दे बैठे। मगर व्यास भी तीव्र विरह वेदना में डूब गये। इसके परिणाम स्वरूप व्यास अग्नि के वास्ते आरणि में जो मंथन कर रहे थे, उसमें से शुक का जन्म हुआ।

कौंधवा दी जिससे ऊर्वशी पुरूरव को नंगे बदन देख सके। भेड़ों को लौटाकर लानेवाले पुरूरव को नंगे बदन देख ऊर्वशी ने उसके चरणों में गिरकर प्रणाम किया और सांत्वना दी–"मैंने पहले ही अपनी शर्तें तुम्हें बताई थीं। तुमने अपनी प्रतिज्ञा का उल्लंघन किया। इसलिए मैं तुम्हारे साथ गृहस्थी नहीं चला सकती; मगर मेरा निवेदन है कि मुझे कभी मत भूलो।"

ऊर्वशी के स्वर्ग में जाते ही पुरूरव एक दम पागल से हो गये। वे ऊर्वशी तथा उसकी चेष्टाओं का स्मरण करते सर्वत्र भटकने लगे। अचानक एक बार ऊर्वशी उन्हें कुरु देश में दिखाई दी।

पिता-पुत्र

व्यास ने शुक को देख सोचा–"यह कैसा अद्‌भुत है? शायद यह शिवजी की महिमा होगी!" इसके बाद वे अपने पुत्र को गंगाजी में ले गये। वहाँ पर स्नान कराकर जात कर्म किया। उस समय आकाश में देव दुंदुभियाँ बज उठीं। पृथ्वी पर फूलों की वर्षा हुई। नारद इत्यादि ने गान किया। रंभा वगैरह अप्सराओं ने नृत्य किया।

तोते का रूप धारण किये नारी के कारण जन्म धारण करने की वजह से व्यास के पुत्र का नाम शुक पड़ गया। वह शिशु धीरे-धीरे बढ़ता गया। शुक के वास्ते आसमान से मृग चर्म, दण्ड और कमंडलु गिर पड़े। व्यास ने अपने पुत्र का उपनयन करके बृहस्पति के यहाँ विद्या का अभ्यास कराया। शुक की विद्या समाप्त हुई। तब वह गुरुदक्षिणा देकर अपने पिता के पास लौट आया। विद्याभ्यास समाप्त कर लौटे अपने पुत्र के साथ व्यास ने प्रसन्नतापूर्वक आलिंगन किया और उसका विवाह भी कराना चाहा। वे एक योग्य मुनि कन्या को खोज लाये और शुक से बोले– "बेटा, तुमने वेद और शास्त्रों का अध्ययन समाप्त किया है। अब विवाह करके यज्ञ-याग करते हुए पुत्रों के जन्म देने का समय आ गया है। पुत्रों के न होने से प्रन्नाम नरक से मुक्ति न मिलेगी। यश भी प्राप्त न होगा। इसलिए तुम एक कन्या के साथ विवाह करो। पुत्रों का जन्म देकर मुझे संतोष पहुँचा दो। तुम मेरी बात का विरोध मत करो। अनेक वर्ष तपस्या करने के बाद तुम मुझे पुत्र के रूप में प्राप्त हो गये हो। मैं यही चाहता हूँ कि तुम्हारे कारण मुझे यश और उत्तम गति प्राप्त हो।"

इस पर शुक ने अपने पिता से कहा– "पिताजी, मैं विवाह करना नहीं चाहता। मुझे तत्वज्ञान का उपदेश दीजिए। आप देखते-देखते मुझे गृहस्थी रूपी सागर में क्यों डुबोना चाहते हैं?"

जादू की मत्स्य कन्या

अंग्रेजों के शासन काल में एक देशी रियासत के राजा राम प्रताप विचित्र स्वभाव का व्यक्ति था। वह अंध विश्वासों के अनुयायी के साथ हठी भी था। उसके दिमाग में कोई बात सूझती और वह भयंकर हानि करनेवाली भी क्यों न हो, छूटती न थी। इस कारण उसके सलाहकार और जनता भी असनीय यातनाओं के शिकार हो जाया करते थे।

एक बार राजा राम प्रताप वंग देश में गया। वहाँ पर जूट की फ़सल को सारे खेतों में देख आया। वही फ़सल अपने देश के खेतों में भी बोने के लिए किसानों पर दबाव डाला। लाचार होकर किसानों ने उसकी आज्ञा का पालन किया। परिणाम स्वरूप किसानों को भारी नुक़सान उठाना पड़ा। सारे खेतों में जूट पैदा करने के कारण देश में खाध्यान्न का अभाव हो गया। अकाल पड़ने से जनता असहनीय यातनाओं का शिकार हो गई।

एक बार राम प्रताप के दिमाग में यह बात सूझी कि कौए यमराज के दूत होते हैं। इसलिए अपने देश में से सारे कौओं का निर्मूल करने का निश्चय किया और उन्हें मार डालने का आदेश जारी किया। साथ ही प्रत्येक मृत कौए के पीछे इनाम भी घोषित किया। जनता ने भारी संख्या में कौओं को मार डाला, इनाम पाये। राजा की समझ में न आया कि मृत कौओं के कलेवर क्या किये जायें? कौओं की मृत देहों से असहनीय दुर्गंध पैदा हुई और लोगों का जीना मुश्किल हो गया। अलावा इसके कौए मल को साफ़ करते थे, अब देश में कौओं के न होने से सर्वत्र सड़ायंध फैल गई और साथ ही सारे देश में बीमारियों का प्रकोप हुआ। अपनी भूल को जानन

श्री· ए. सी. सरकार, जादूगर

के बाद राम प्रताप ने पड़ोसी देशों से कौए पकड़कर लानेवालों को इनाम देने की घोषणा की। ऐसे विचित्र स्वभाव का व्यक्ति था राम प्रताप।

इस प्रकार कई अवांछित घटनाएँ हो गईं, पर राम प्रताप के रवैये में कोई परिवर्तन न आया। एक बार राम प्रताप ने अपने मंत्री से पूछा–"मंत्री महोदय! मत्स्य कन्याओं के बारे में आप की क्या राय है?"

"प्रभू! मैंने ऐसे प्राणी को कहीं नहीं देखा है। इसलिए उस संबंध में कुछ बता नहीं सकता।" मंत्री ने जवाब दिया।

"पिछली रात को मैंने सपने में ऐसे प्राणी को देखा। उसका ऊपरी भाग मानव का और नीचे का हिस्सा मछली का। यह विचित्र बात है न?" राजा ने कहा।

राम प्रताप के राजमहल के सामने एक बड़ा सरोवर था। उस सरोवर का जल ही सारे नगर के लोगों के पीने के काम में लाया जाता था। उसमें मछलियाँ थीं, चांदनी की रातों में राम प्रताप छोटी-सी डोंगी में उस सरोवर में विहार किया करता था। मंत्री के साथ राजा ने मत्स्य कन्या के संबंध में बात की। वह एक चांदनी की रात में अकेले सरोवर में नौका विहार करने निकला। मगर वह जल्द ही अपने महल को लौट आया और मंत्री के पास खबर भेजी।

मंत्री आ पहुंचा। राजा ने उससे कहा–"मैंने सरोवर में अभी थोड़ी देर पहले एक मत्स्य कन्या को देखा है। वह मेरी डोंगी के सामने हवा में उछलकर पानी में गिर पड़ी। मैंने साफ़-साफ़ देखा–आधा मानव और आधा मछली। मुझे इस वक़्त वह मत्स्य कन्या चाहिए। वह भाग न जाय। इसलिए तुम सरोवर के चारों तरफ़ कड़ा पहरा बिठा दो। उसको जाल में फंसाने का प्रबंध करो।"

"महाराज! यह आप का भ्रम हो सकता है। एक बड़ी मछली को देख शायद आप ने उसे मत्स्य कन्या समझा होगा। धुंधली चांदनी थी न?" मंत्री ने सुझाया।

"मेरी आंखों में कोई दृष्टिदोष नहीं है। मेरे कहे अनुसार करवा दो।" राजा ने स्पष्ट कहा।

मत्स्य शाखा के लोगों ने आकर सारे सरोवर को छान डाला। हज़ारों मछलियाँ फँस गईं, पर कहीं मत्स्य कन्या का पता न चला।

इस पर राजा ने आदेश दिया–"सरोवर का सारा पानी निकलवाकर उसे सुखा दो।" यह बात सुनने पर मंत्री ने राजा को समझाना चाहा कि सरोवर का सारा पानी निकालने पर राजधानी जलमय हो जाएगी और जनता में पानी के वास्ते त्राहि त्राहि मच जाएगी। पर राजा सुनने की स्थिति में न था। उसने मत्स्य

कन्या को पकड़ने की अपनी जिद्दी की पुनरावृत्ति की।

"जी हाँ, महाराज! सरोवर का सारा पानी निकलवाकर उसे खाली करने में दो-तीन दिन लग सकते हैं। अब सरोवर में एक भी मछली बच न रही। इसलिए मत्स्य कन्या के होने की कोई संभावना भी नहीं है। आप कृपया दो-तीन दिन खूब सोचिए। कहीं आप को दृष्टि दोष हो गया हो।" मंत्री ने फिर से समझाया।

राजा मंत्री पर खीझ उठा। मंत्री दुखी हो अपने घर लौट आया। उसका भतीजा हलधर जो जादूगर था, पड़ोसी देश से आया हुआ था। मंत्री को चिंतित देख हलधर ने इसका कारण पूछा। सारा वृत्तांत जानकर समझाया—"चाचाजी! क्या आप के राजा के कहीं दृष्टिदोष तो नहीं है? उनके दृष्टि दोष है, यह साबित करने के लिए मैं एक यंत्र तैयार करता हूँ। आप जाकर विश्राम कीजिए।"

इसके बाद हलधर ने तीन इंच लंबे और एक इंच चौड़े एक कागज़ को लेकर उसके मध्य भाग को मोड़ दिया। मोड़वाले हिस्से को एक कांच के गिलास के नीचे के हिस्से में चिपका दिया। एक चीनी मिट्टी की थाली के बीच आठन्नी का सिक्का इस तरह रखा, जिससे चित्रवाला हिस्सा ऊपर की ओर हो, तब उस पर थोड़ा पानी डाल दिया। इसके बाद कांच के गिलास के नीचे स्थित काग़ज़ को जलाकर लोटे भर में घना धुआँ फैला दिया, तब उसे चीनी मिट्टी की थाली पर औंधाकर रख दिया। अब गिलास के किनारे से अठन्नी के सिक्के को देखने पर वह बड़े आकार में दिखाई देने लगा।

इसके बाद हलधर ने मंत्री को बुलाकर पूछा—"चाचाजी! इस वक़्त थाली में कितने रुपये हैं?'

मंत्री ने सावधानी से देखकर जवाब दिया—"अरे कितने कहाँ? एक ही तो रुपया है।"

"क्या आप प्रमाण सहित बतला सकते हैं कि एक ही रुपया है, ज्यादा रुपये नहीं हैं?" हलधर ने फिर पूछा।

"क्यों नहीं?" मंत्री ने कहा।

आप भ्रम में पड़ गये, चाचाजी! वह रुपया नहीं, अच्छी तरह से देख लीजिए!" ये शब्द कहते कांच का गिलास उठाकर थाली के पानी में से अठन्नी का सिक्का निकालकर हलधर ने मंत्री को दिखाया। इसमें कोई संदेह न था कि आंख भ्रम में आ गई थी।

यह भ्रम पैदा करने का उपाय हलधर के द्वारा जानकर मंत्री उस यंत्र को लेकर राजमहल में पहुँचा। राजा के सामने रखकर पूछा—"महाराज! आप को इस गिलास में कितने रुपये दीखते हैं?"

"एक ही रुपया है। क्या तुम समझते हो कि मैं भ्रम में पड़ जाऊँगा और मुझे दृष्टिदोष है?" राजा ने कहा।

"महाराज, क्षमा कीजिए! मेरे भतीजे ने मुझसे यही सवाल किया तो मैंने भी यही जवाब दिया कि एक ही रुपया है, पर मेरे भतीजे ने बताया कि मेरी आँखें भ्रम में आ गईं। मैंने यह सोचकर आप से पूछा कि आप की दृष्टि मेरी दृष्टि से तीक्ष्ण है और आप के भ्रम में आने की संभावना नहीं है। क्या हम देख ले कि गिलास के नीचे क्या है?" मंत्री ने पूछा।

राजा ने झट से गिलास ऊपर उठाया। चीनी मिट्टी की थाली में अठन्नी थी।

राजा ने चकित होकर कहा—"क्या मेरे लिए भी दृष्टिदोष है? कहीं मेरी देखी हुई मत्स्य कन्या भी इसी प्रकार भ्रम तो नहीं है?" अपने आप में राजा गुनगुना उठा।

"क्यों नहीं हो सकता महाराज? आप ने बताया कि उसके पिछले दिन की रात को ही सपने में मत्स्य कन्या को देखा है। शायद अब सरोवर को खाली कराने की जरूरत नहीं पड़ेगी। आप का क्या आदेश है?" मंत्री ने मौक़ा पाकर पूछा।

राजा ने अस्वीकार सूचक सर हिलाया। मंत्री ने संतोष की साँस ली।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ मार्च १९७९ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

K. Satyanarayana Prasad

★

B. M. Chopra

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ जनवरी १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

नवंबर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **मैं हूँ भावी कलाकार!**

द्वितीय फोटो : **कला ही मेरा रोजगार!!**

प्रेषक: हीरालाल के. भोगरा, सुभाष रोड, पोस्ट: कलिंजरा, जिला: बंसवाडा (राज.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

చందమామ අම්බිලි මාමා

Chandamama, now published in twelve Indian languages including English and entertaining millions of readers in India, makes its debut in Srilanka. To the President and people of Srilanka, we dedicate our inaugural issue in Sinhala.

AMBILIMAMA

CHANDAMAMA

the monthly magazine for children through which the old become young and the young remain young.

CHANDAMAMA PUBLICATION

CHANDAMAMA (Hindi) JANUARY 1979 Regd. No. M. 5452
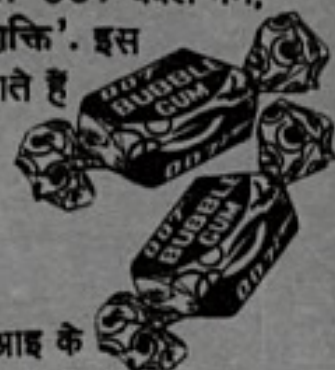
बच्चों का स्वास्थ्य, राष्ट्र का भाग्य! – बाल-वर्ष–१९७९